

## 'आत्मनिर्माण' सबसे बड़ा पुण्य-परमार्थ है।

इस संसार में अनेक प्रकार के पुण्य और परमार्थ हैं। शास्त्रों में नाना प्रकार के धर्म-अनुष्ठानों का सिवस्तार विधि-विधान है और उनके सुविस्तृत माहात्म्यों का वर्णन है। दूसरों की सेवा-सहायता करना पुण्यकार्य है, इससे कीर्ति, आत्मसंतोष तथा सद्गित की प्राप्ति होती है। पर इन सबसे भी बढ़कर एक पुण्य-परमार्थ है और वह है-'आत्मिनमिण'। अपने दुर्गुणों को, विचारों को, कुसंस्कारों को, ईर्ष्या, तृष्णा, क्रोध, दाह, क्षेम, चिंता, भय एवं वासनाओं को विवेक की सहायता से आत्मज्ञान की अठिन में जला देना इतना बड़ा धर्म है, जिसकी तुलना सहस्र अश्वमेधों से नहीं हो सकती। अपने अज्ञान को दूर करके मन-मंदिर में ज्ञान का दीपक जलाना भगवान की सच्ची पूजा है। अपनी मानसिक तुच्छता, दीनता, हीनता, दासता को हटाकर निर्भयता, सत्यता, पवित्रता एवं प्रसन्नता की आत्मिक प्रवृत्तियाँ बढ़ाना करोड़ मन सोना दान करने की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है।

हर मनुष्य अपना-अपना आत्मनिर्माण करे तो यह पृथ्वी स्वर्ग बन सकती है। फिर मनुष्यों को स्वर्ग जाने की इच्छा करने की नहीं, वरन देवताओं को पृथ्वी पर आने की आवश्यकता अनुभव होगी, दूसरों की सेवा-सहायता करना पृण्य है, पर अपनी सेवा-सहायता करना इससे भी बड़ा पुण्य है। अपनी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्थिति को ऊँचा उठाना, अपने को एक आदर्श नागरिक बनाना इतना बड़ा धर्मकार्य है, जिसकी तुलना अन्य किसी भी पृण्य-परमार्थ से नहीं हो सकती।

— पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य



\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*

संस्थापक-संरक्षक वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य एवं

शक्तिस्वरूपा माता भगवती देवी शर्मा

संपादक

डॉ० प्रणव पण्ड्या कार्यालय

अखण्ड ज्योति संस्थान घीयामंडी, मथुरा ( 281003 )

दूरभाष नं० ( 0565 ) 2403940, 2402574

2412272, 2412273 9927086291

मोबाइल नं० 7534812036

7534812037

7534812038

7534812039

कृपया इन मोबाइल नंबरों पर

एस. एम. एस. न करें।

नया ईमेल

\*\*\*\*\*\*

akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

प्रातः 10 से सायं 6 तक

वर्ष : 86

अंक : 02 फरवरी

: 2022 माघ-फाल्ग्न : 2078

प्रकाशन तिथि : 01.01.2022

वार्षिक चंदा

भारत में : 220/-विदेश में : 1600/-

आजीवन ( बीसवर्षीय )

: 5000/-

## 🎇 मनोविकार 🦥

जीवन में अच्छे मित्रों को ढूँढ़ने की जितनी आवश्यकता होती है, उतनी ही आवश्यकता शत्रुओं को पहचानने की भी होती है। शत्रुओं का अर्थ मात्र उनसे नहीं है, जो हमारे ऊपर घात-प्रतिघात करते हैं, पर उन अवसरवादियों से भी है जो जब समय या अवसर मिले, तब हमारे ऊपर प्रतिघात करने में चुकते नहीं हैं। सिर में जुएँ, खाट में खटमल, गोदाम में चूहे, हवा में विषाण, पानी में जीवाण निरंतर बने ही रहते हैं और जब उनको अवसर मिलता है, तभी वे हमारे ऊपर कोई-न-कोई प्राणघातक संकट खडा कर देते हैं।

शत्रओं में कुछ शत्र बाहरी होते हैं और उनकी पहचान बाहर ही हो जाती है, पर इन शत्रुओं में कुछ शत्रु आंतरिक होते हैं, जो मनोविकारों के रूप में हमारे स्वभाव में सम्मिलित हो जाते हैं। आलस्य, प्रमाद, उद्विग्नता, चिंता, भय, ईर्घ्या, अविश्वास जैसे दुर्गुण ऐसे हैं कि यदि हमारी आदत में शामिल हो गए तो उनके द्वारा वो हानि फैल जाती है, जो बाहरी शत्रु भी नहीं कर पाते।

स्मरण रखना चाहिए कि चिंतन से चरित्र और चरित्र से व्यक्तित्व बनता है। चिंतन यदि दूषित हो जाए तो प्रकारांतर से कुकर्म की ही पृष्ठभूमि तैयार होती है। मनुष्य की मन:स्थिति ही तदनुरूप परिस्थितियाँ बनाती है और उन्हीं के अनुसार व्यक्ति को सुख-दु:ख से भरे प्रतिफल मिलते हैं। इसीलिए कहा गया है कि मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है। गुण, कर्म, स्वभाव-ये तीनों ही कर्म का आधार बनते हैं। ये अच्छे स्तर के हों तो मित्र हैं और यदि इनमें विकृति घुस पड़े तो ये ही शत्रु बन जाते हैं। मनोविकाररूपी शत्रुओं पर विजय पाना ही आत्मिक संघर्ष का मुलाधार है।

फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

\*\*\*\*\*

\*\*\*\*

\*\*\*\*

आवरण—1 आवरण—2 मनोविकार विशिष्ट सामयिक चिंतन भारत के भविष्य पर ग्रहणरूपी ये समस्य माँगती हैं तरंत समाधान	1 2 3		चेतना की शिख साधना स्वर्ण जयं यथार्थ त्याग का म	ती गर्म	37 40			
आवरण—2 मनोविकार विशिष्ट सामयिक चिंतन भारत के भविष्य पर ग्रहणरूपी ये समस्य	3		यथार्थ त्याग का म	ार्म				
विशिष्ट सामयिक चिंतन भारत के भविष्य पर ग्रहणरूपी ये समस्य	3				40			
विशिष्ट सामयिक चिंतन भारत के भविष्य पर ग्रहणरूपी ये समस्य	шĭ							
भारत के भविष्य पर ग्रहणरूपी ये समस्य	шţ		MENANCE CAL	तंस्कृति शोध सार-154				
				याओं का				
माँगती हैं तुरंत समाधान 5			आत्मसंतोष पर प्र	भाव	43			
<ul><li>भारतीय संस्कृति में चिरित्र की अवधारणा</li><li>8</li></ul>			जापान के हिंदू रे					
🗱 बाह्य नहीं, आंतरिक वैराग्य से			सांस्कृतिक साम्य	ाता	46			
क्ष पर्व विशेष			अधम योनियों में	गिरते हैं.				
					48 50			
			वर्षा जल का संग्र	ह करें	52			
			मनुष्य में देवत्व व	ज उदय ( पूर्वार्द्ध)	54			
🕉 ऋतुराज वसंत 17 🍪 जीवन एक मेला है 19			विश्वविद्यालय परिसर से—200					
<ul> <li>निष्काम कर्म है कर्मयोग</li> <li>21</li> </ul>								
			अपनों से अपनी	बात	60			
🗱 सबके लिए खला है सख का द्वार 28			आधार है उच्चे आदर्श					
🗱 संयुक्त परिवार की उपादेयता 29								
🕸 आध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान 32			आवरण—3	,	66 67			
उपासना का आधार	34	😽 आवरण—4						
3	भावरण पृ	ष्ठ प	ारिचय					
# आवरण—1								
फरवरी	-मार्च, 20	22 वे	 ह पर्व-त्योहार					
गिनवार ०५ फरवरी वसंत पंचमी/परम		मंगल	वार ०८ मार्च	े सर्य षष्ठी	- 1			
	•/	1						
•	VI	_						
• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •								
	0 00							
बुधवार 16 फरवरी संत रविदास जयं		शुक्रव		61				
		1 700-00	शर 25 मार्च	र्गे शीतलाष्टमी	1			
विवार 27 फरवरी विजया एकादशी		शुक्रव	25 11 9					
		। शुक्राव सोमव			J			
**************************************	होता है आत्मबोध पर्व विशेष अंतःकरण को झकझोर दे, साहित्य ऐसा चाहिए हरि ब्यापक सर्बत्र समाना, प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना ऋतुराज वसंत जीवन एक मेला है निष्काम कर्म है कर्मयोग कबीर का बहुआयामी व्यक्तित्व निराशा को न होने दें हावी सबके लिए खुला है सुख का द्वार संयुक्त परिवार की उपादेयता आध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपा उपासना का आधार  अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपा उपासना का आधार  अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपा उपासना का आधार  क्वां प्रस्वरी विवार 05 फरवरी वसंत पंचमी/परम् गुरुदेव बोध दिव विवार 06 फरवरी सूर्य षष्ठी विवार 12 फरवरी जया एकादशी	होता है आत्मबोध  पर्व विशेष  अंतःकरण को झकझोर दे, साहित्य ऐसा चाहिए हिर ब्यापक सर्बत्र समाना, प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना  त्रमतुराज वसंत जीवन एक मेला है निष्काम कर्म है कर्मयोग  कबीर का बहुआयामी व्यक्तित्व दिन्राशा को न होने दें हावी सबके लिए खुला है सुख का द्वार संयुक्त परिवार की उपादेयता अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान उपासना का आधार  अावरण प्र शांतिकुंज मे  फरवरी-मार्च, 20  पनिवार 05 फरवरी वसंत पंचमी/परमफूच गुरुदेव बोध दिवस  विवार 06 फरवरी सूर्य षष्ठी पनिवार 12 फरवरी जया एकादशी	होता है आत्मबोध  पर्व विशेष  अंतःकरण को झकझोर दे, साहित्य ऐसा चाहिए हिर ब्यापक सर्बत्र समाना, प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना  त्रिम तें प्रगट होहिं मैं जाना  तें प्रगट होहिं मै जाना  तें प्रगट होहिं मैं जाना  तें प्रगट होहिं में जाना  तें प्रगट होहिं मैं जाना  तें प्रगट होहिं मैं जाना  तें प्रगट होहिं मैं जाना  तें प्रगट होहिं में जनका  तें प्रगट होहिं मैं जाना  तें प्रगट होहिं में जाना  तें प्रगट होहिं में जाना  ते	होता है आत्मबोध  पर्व विशेष  अंतःकरण को झकझोर दे,  साहित्य ऐसा चाहिए  हिर ब्यापक सर्बत्र समाना,  प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना  ऋतुराज वसंत  जीवन एक मेला है  निष्काम कर्म है कर्मयोग  कबीर का बहुआयामी व्यक्तित्व  निराशा को न होने दें हावी  सबके लिए खुला है सुख का द्वार  अध्यादिमक जीवन के व्यावहारिक सोपान  उपासना का आधार  श्रमांतिकुंज में आवरण—4  श्रमांतिकार  परवरी-मार्च, 2022 के पर्व-त्योहार  एरवरी-मार्च, 2022 के पर्व-त्योहार  मंगलवार 08 मार्च  गुरुदेव बोध दिवस  विवार 06 फरवरी सूर्य षष्ठी  तिवार 12 फरवरी जया एकादशी  गुरुवार 17 मार्च	होता है आत्मबोध  पर्व विशेष  अंत:करण को झकझोर दे, साहित्य ऐसा चाहिए हिर ब्यापक सर्बत्र समाना, प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना  ऋतुराज वसंत जीवन एक मेला है निष्काम कर्म है कर्मयोग कबीर का बहुआयामी व्यक्तित्व निराशा को न होने दें हावी  सबके लिए खुला है सुख का द्वार संयुक्त परिवार की उपादेयता आध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान उपासना का आधार  सम्प्र एं संपूर्ण जीवन का अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान उपासना का आधार  सम्प्र एं संपूर्ण जीवन का अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान उपासना का आधार  सम्प्र एं संपूर्ण जीवन का अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान उपासना का आधार उपासना का आधार  सम्प्र एं संपूर्ण जीवन का अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान अध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान उपासना का आधार उपासना का आधार  सम्प्र एं संपूर्ण जीवन का अध्यात्मिक वसंत (कविता) आध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान उपासना का आधार उपासना का आधार  सम्प्र पर्व परिचय  शांतिकुंज में आया वसंत  मंगलवार 08 मार्च सूर्य षष्ठी सोमवार 10 मार्च होलाप्टक/लड्डू होली सोमवार 14 मार्च आमलकी एकादशी निवार 12 फरवरी जया एकादशी ग्रह्वार 10 मार्च होलाक्र (इह्न होली			

शनिवार	05 फरवरी	वसंत पंचमी/परमपूज्य	मंगलवार	08 मार्च	सूर्य षष्ठी
		गुरुदेव बोध दिवस	गुरुवार	10 मार्च	होलाष्टक/लड्डू होली
रविवार	06 फरवरी	सूर्य षष्ठी	सोमवार	14 मार्च	आमलको एकादशी
शनिवार	12 फरवरी	जया एकादशी	गुरुवार	17 मार्च	होलिका दहन
बुधवार	16 फरवरी	संत रविदास जयंती/पूर्णिमा	शुक्रवार	18 मार्च	होली/धूलिवंदन
रविवार	27 फरवरी	विजया एकादशी	शुक्रवार	25 मार्च	शीतलाष्टमी
मंगलवार	01 मार्च	महाशिवरात्रि	सोमवार	28 मार्च	पापमोचनी एकादशी
शुक्रवार	04 मार्च	श्री रामकृष्ण परमहंस जयंती	मंगलवार	29 मार्च	प्रदोष व्रत

## मिश्रेष्ट सामिक चितन भावत के भविष्य पंच गृहण्यूपी ये अमुन्याएँ भागती हैं तुवंत वसमाधान

मानवीय प्रगित की यात्रा में समय-समय पर अपने विकास के सोपानों का सम्यक मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है, तािक ये विवेचना की जा सके कि जिस पथ पर हम चल रहे हैं, उस पर प्राप्त होने वाली उपलब्धियाँ संतोषप्रद हैं अथवा नहीं? यह मूल्यांकन इस दृष्टि से भी जरूरी है; क्योंिक कभी-कभी विकास की दौड़ में, प्रतिस्पर्धा के युग में—महत्त्वाकांक्षाओं का बोलबाला इतना भीषण हो जाता है कि उद्देश्य, भावनाएँ इत्यादि उस भीड़ में खो जाते हैं। वो प्रयास जो सात्त्वक, सार्थक व सकारात्मक होने के कारण पुरुषार्थ की संज्ञा पा सकते थे—वे अहंकार से लबालब होने के कारण उन्माद का स्वरूप ले बैठते हैं।

यदि हम वर्तमान समय की समीक्षा इसी आधार पर करें तो हम शायद इसी नतीजे पर पहुँचें कि आज संभवतया कोई उन्माद इनसान के दिमाग पर चढ़ गया है, जिसके कारण वह भगवान की बनी-बनाई इस सृष्टि को उजाड़ने में, उसका विध्वंस करने में ही अपने जीवन को निरत करके बैठा है। ऐसा लगता है मानो एक पागलपन की प्रतिस्पर्धा-सी हो रही है, जिसमें गलत दिशा में चलने के लिए हर कोई दीवाना है और हर कोई कुपथ को ही अपनाना चाहता है।

जिन चीजों के ऊपर मानवता का, हमारा और हमारे बाद आने वाली समस्त पीढ़ियों का अस्तित्व निर्भर करता हो—यदि हम उन्हें ही छिन्न-भिन्न करने में, नष्ट करने में जुट जाएँ तो भला इसे विक्षिप्तता के सिवाय और क्या कहा जाए? जिस डाल पर हम बैठे हों—यदि उसे ही काटने पर हर कोई आमादा हो जाए तो भला उसे पागलपन के अतिरिक्त और क्या संज्ञा दी जाए?

आज, सर्वत्र व्याप्त पर्यावरण प्रदूषण की भयावह एवं विकराल रूप लेती समस्या को देखकर कुछ ऐसा ही कहने को मन करता है। इस समस्या के लिए मानव जिम्मेदार कैसे है या मानवकृत कार्य इसके लिए जिम्मेदार कैसे हैं—इन मुद्दों पर सोचने से पहले इस समस्या की विकरालता पर एक दृष्टि दौड़ा लेना जरूरी हो जाता है। पर्यावरण प्रदूषण की समस्या वह समस्या है, जिसका सरोकार राष्ट्र, संस्कृति एवं विश्व—सभी के साथ है। इस समस्या का सरोकार किसी एक धर्म के साथ नहीं है, किसी एक वर्ग के साथ नहीं है, किसी एक वर्ग, जाति या देश के साथ नहीं है, वरन संपूर्ण मानवता के साथ है। यदि यह हवा साँस लेने लायक ही नहीं रह जाएगी, यह पानी पीने लायक ही नहीं रह जाएगा, यह धरती अन्न उपजाने से मना कर देगी तो उसके दुष्परिणाम संपूर्ण मानव जाति को भुगतने पड़ेंगे—किसी एक मुहल्ले को नहीं। दु:खद सत्य यह है कि आज लोग इस सत्य को देखते–जानते हुए भी इससे अपरिचित होकर अपने जीवन को जीते हुए नजर आते हैं।

पाठकों को स्मरण होगा कि जब दिल्ली में वायु प्रदूषण अपने चरम पर था तो भारतीय चिकित्सा परिषद् को उसे राष्ट्रीय आपदा घोषित करना पड़ा था; क्योंकि उस समय वहाँ की वायु में वायु प्रदूषण करने वाले कारकों का स्तर स्वीकार्य स्तर से 34 गुना ज्यादा था। स्पष्ट है कि वो हवा नहीं, बल्कि एक तरह से जहर ही है, जहाँ वायु प्रदूषण का स्तर इस कदर विषैला हो चुका हो। आज हम अपनी आर्थिक उपलब्धियों को गर्व से देखते नजर आते हैं, परंतु यह कैसे भूल जाते हैं कि वायु प्रदूषण के आधार पर तैयार विश्व के समस्त देशों की सूची में हम 120 देशों की सूची में 96 नंबर पर हैं। क्या यह शरम की बात नहीं है? क्या यह चिंता की बात नहीं कि भारत के महानगरों में से आज 80% की हवा विषैले स्तर की हो चली है?

आज वायु प्रदूषण भारत में होने वाली मौतों के कारणों में पाँचवाँ सबसे बड़ा कारण है। कहने का अर्थ यह है कि युद्ध अथवा आतंकवाद से उतने लोग नहीं मर रहे, जितने वायु प्रदूषण से मर रहे हैं। अकेले सन् 2012 में 92 लाख लोगों की मौत की वजह वायु प्रदूषण था। कल्पना करके देखें कि आज दिल्ली क्षेत्र (एन.सी.आर.) के लगभग 10 लाख बच्चे वायु प्रदूषण के कारण अपने श्वसन तंत्र को लगभग पूर्णरूपेण नष्ट करके बैठे हैं।

ॐ ४४४,<sup>४</sup>४४४४४४४४५,<sup>४</sup>४४४४४४ ►'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **∢** ४४४४४४४४४४४४४४४०

फरवरी, 2022 : अखण्ड ज्योति

\*\*\*\*

हवा हमारे देखते-देखते जहरीली हो चली है। पानी में फैलता प्रदूषण भी कहाँ कम है? कुछ स्थानों पर गंगा की स्थिति यह है कि वहाँ पानी में डाले जा रहे क्रोमियम, निकिल के कारण बंदरों को कैंसर जैसे रोगों का सामना करना पड़ रहा है। अनुभव लगाया जा सकता है कि इसका जो प्रभाव इनसानों पर पड रहा होगा—वो कैसा होगा?

पर्यावरण की विषाक्तता का आलम यह है कि आसमान से होने वाली वर्षा भी अब खुशी, आनंद, उत्सव का कारण नहीं रही, बल्कि वह तो जहर से भरी हुई है। सन् 1990 में भारत के कारखानों से उत्सर्जित होने वाला सल्फर लगभग 4400 किलोटन था, जो अब 19,000 किलोटन के करीब पहुँच चुका है। यह सल्फर वर्षा जल के साथ मिलकर एसिड के रूप में धरती पर गिरता है और इस एसीडिक रेन या अम्लीय वर्षा के कारण जलीय पशु मरते हैं। औषधियाँ एवं वनस्पतियाँ नष्ट होती हैं। यहाँ तक कि इमारतें नष्ट होती हैं तो उसका जो प्रभाव एवं असर इनसानों पर पड़ता होगा या पड़ रहा है—उसके विषय में क्या लिखा जाए?

यदि गंभीर प्रश्न पर विचार किया जाए अर्थात विचार इस पर किया जाए कि पर्यावरण प्रदूषित क्यों है? यह बारिश जहरीली क्यों है? निदयाँ सूख क्यों रही हैं? ग्लेशियर पिघल क्यों रहे हैं? जड़ी-बूटियाँ समाप्त क्यों हो रही हैं? मौसम बेकाबू क्यों हैं—तो इन सबके पीछे जो एक प्रमुख कारण, भारत के परिप्रेक्ष्य में नजर आता है तो वह है—भारत की बेतहाशा, बिना नियंत्रण के बढ़ती जनसंख्या।

सन् 1947 में, भारत को स्वतंत्रता मिलने के समय— भारत की आबादी 36 करोड़ थी, जो आज बढ़कर 135 करोड़ के करीब हो गई है अर्थात तब से लेकर आज तक हम लगभग 3.5 गुना ज्यादा हो गए हैं। आजादी के समय जितने संसाधन एक व्यक्ति के पास थे—उतने साधनों में लगभग एक पूरे परिवार को आज अपना गुजारा करना पड़ता है।

फिर यह जो संख्या नित्यप्रति बढ़ती हो चली जा रही है—वह संख्या जीवित इनसानों की बढ़ रही है, कुरसी, मेज इत्यादि की नहीं। जीवित व्यक्तियों की जीवित आवश्यकताएँ होती हैं, जिनकी पूर्ति के लिए संसाधनों के भंडार पर हमले करने होते हैं। जीवित इनसान को रहने के लिए घर चाहिए, इलाज के लिए अस्पताल चाहिए, काम करने के लिए ऑफिस चाहिए, पढ़ने के लिए विद्यालय व विश्वविद्यालय चाहिए और इसीलिए मॉल, एपार्टमेंट, कारखाने—इनकी संख्या आबादी बढने के साथ-साथ बढती जाती है।

इनको बनाना है तो पेड़ काटने होंगे—पेड़ कटेंगे तो ही तो आवास व कारखाने बन सकेंगे और जब पेड़ कटते हैं तो क्या होता है? धरती की उर्वरता नष्ट होती है, वर्षा की दर खतम होती है और खिनजों का भंडार लुप्त होता है। इसलिए देखने में अलग-अलग लगने वाली ये समस्याएँ वस्तुत: एक ही समस्या के दो पहलू कहे जा सकते हैं।

इसी अनियंत्रित आबादी का दुष्परिणाम हमें पर्यावरण प्रदूषण के रूप में देखने को मिलता है। इसी के दुष्प्रभावों के रूप में हम लोगों का गिरता स्वास्थ्य देखते हैं। 30-30 साल के लोगों को हृदयाघात होते हुए एवं 10-10 साल के बच्चों को कैंसर से तड़पते देखते है। यह जो स्थिति, वो तो आज की तारीख में है। समझदारी का तकाजा यह है कि इन सभी कारणों पर तत्काल रोक लगाई जाए, ताकि हम एक साफ, स्वच्छ व स्वस्थ दुनिया अगली पीढ़ी को सौंप सकें।

इस विषय पर हुए शोधों के निष्कर्ष तो यहाँ तक बोलते हैं कि यदि हम उन सभी कारणों पर रोक लगा दें, जिनके कारण आज ये समस्याएँ विकराल रूप लिए खड़ी हैं—वाहनों को बदल दें, खुले में सिगरेट पीने पर रोक लगा दें, प्रदूषण के जिम्मेदार कारखानों को बंद कर दें—तब भी स्थिति को सामान्य होने में 30 से अधिक साल लग जाएँगे।

दुर्भाग्यपूर्ण तो यह है कि इन कारणों पर रोक लगाना तो दूर—हम तो अपने पतन की गित तीव्र—से–तीव्र करते जा रहे हैं। पेड़ हम बेतहाशा काट रहे हैं, आबादी बढ़ती ही जा रही है, कारखाने खुलते ही जा रहे हैं, प्रदूषण के कारणों को हम बढ़ाते ही जा रहे हैं। यदि इन नीतियों को समय रहते सुधारा न गया तो इनका परिणाम विनाश, विध्वंस एवं विप्लव के अलावा क्या मिलने वाला है?

हो सकता है कि शेष समाज को चेतने में समय लगे, परंतु गायत्री परिवार के जाग्रत समुदाय को इस विषय में तुरंत और स्पष्ट कार्य करने की जरूरत है। विद्यालयों से लेकर अस्पतालों तक और घरों से लेकर शॉपिंग कांप्लेक्स तक भारत एवं विश्व के भविष्य के लिए जरूरी इस चिंतन को लेकर के जाने की आवश्यकता आज आन पड़ी है। भारत एवं मानवता का भविष्य इस आशा के साथ हमारी ओर देखता है कि हम समय पर

कुछ सार्थक निर्णय ले पाने की स्थिति में आ सकें। आशा ही नहीं, बल्कि विश्वास है कि इस जिम्मेदारी को हम सम्यक तरह से निभा सकेंगे।

यहाँ इन बातों को लिखने का उद्देश्य यह है कि परमपूज्य गुरुदेव द्वारा वर्षों पहले की इस स्थिति पर दृष्टि दौड़ा देने के बाद उनके समाधान के लिए एक सशक्त व्यवस्था शांतिकुंज में बनाई गई थी। पर्यावरण संरक्षण को

परमपूज्य गुरुदेव ने शांतिकुंज द्वारा चलाए जा रहे समस्त आंदोलनों में से एक के रूप में शामिल किया और वृक्ष गंगा अभियान, तीर्थ शुद्धि अभियान, जल शुद्धि अभियान, आरण्यकों की स्थापना जैसे अभूतपूर्व प्रकल्प उसके माध्यम से विनिर्मित किए। आज की परिस्थितियों में परमपूज्य गुरुदेव द्वारा तब उठाए गए कदम अब अत्यंत ही सामयिक नजर आते हैं।

घटना तब की है जब महाराजा विक्रमादित्य उज्जियनी के राजा थे। उन्होंने अपने मंत्रियों को प्रजा का काम तुरंत करने की आज्ञा दी हुई थी। एक दिन एक आदमी विजयपाल नामक मंत्री के घर शुक्रवार की मध्यरात्रि को पहुँचा। दरवाजा खटखटाने पर मंत्री ने अंदर से कह दिया—''मैं अभी मजबूर हूँ, किसी काम में व्यस्त हूँ। अभी बाहर नहीं आ सकता। कृपया दूसरे दिन कभी भी आ जाइएगा।''

उस व्यक्ति ने दूसरे दिन महाराज विक्रमादित्य से विजयपाल मंत्री की शिकायत की। विक्रमादित्य ने पूरा घटनाक्रम सुना तो नाराज होकर विजयपाल से ऐसा करने का कारण पूछा। मंत्री ने कहा—''मेरी कुछ मजबूरी थी। वह मेरा राज है। कृपया उसे मेरे तक रहने दीजिए।'' परंतु विक्रमादित्य ने उत्तर पाने की जिद की।

इस पर विजयपाल ने कहा—''महाराज! सप्ताह के छह दिन मैं कार्य में बहुत व्यस्त रहता हूँ। गुरुवार की रात को समय निकालता हूँ। मेरे पास कपड़ों का एक ही जोड़ा है, उसे मैं गुरुवार की रात धोता हूँ उस हालत में मैं बाहर कैसे आ सकता हूँ? फिर नित्यकर्म भी करने होते हैं। अन्य दिनों उसके लिए भी समय नहीं मिलता। मेरा रहस्य बस, यही है।''

विक्रमादित्य ने सुना तो परमात्मा को धन्यवाद दिया कि उनके राज्य में ऐसे मंत्री भी मौजूद हैं, जो अपनी जिम्मेदारी बखूबी समझते हैं। वे न तो प्रजा के प्रति लापरवाह हैं और न ही ईमानदारी को भूलते हैं। ऐसे कर्त्तव्यपरायण कर्मचारियों से किसी राष्ट्र की प्रगति सुनिश्चित हो पाती है।



चिरत्र निर्माण भारतीय संस्कृति की सदा से धुरी रहा है। भारतीय संस्कृति की विशिष्टता और इसकी महानता का प्रमुख आधार इसके चिरत्रनिष्ठ नागरिक, शासक एवं गणमान्य जन रहे हैं, जिनके आधार पर यहाँ के नागरिक आदर्शों की मिसाल रहे, परिवार नररत्नों की खदान बने और पूरा समाज सुख, समृद्धि एवं शांति के उच्चतम प्रतिमानों को छूता हुआ पूरे विश्व में अपनी श्रेष्ठता एवं अद्वितीयता के साथ प्रतिष्ठित रहा।

मध्यकाल में चारित्रिक दुर्बलता के कारण जब सामाजिक ताना-बाना कमजोर हुआ तो ऐसे में विदेशी आक्रांताओं को इसमें घुसपैठ का मौका मिला और परिणामस्वरूप लंबे अंतराल तक इसने दासता का दंश झेला। पुन: इसके चरित्रनिष्ठ नेतृत्व एवं जाग्रत जनचेतना के आधार पर इसने इस दासता से मुक्ति पाई है और शनै:-शनै: अपनी सनातन गौरव-गरिमा में प्रतिष्ठित होने की ओर अग्रसर है, लेकिन अभी भी बहुत कार्य शेष है।

आवश्यकता है अपने पुरखों की दी गई शिक्षाओं एवं सीखों को पुन: स्मरण करने की, उन्हें आत्मसात् करने की व उन्हें जीवन में धारण कर सांस्कृतिक संक्रमण के इस दौर में देव संस्कृति के सच्चे संवाहक बनकर अपना सकारात्मक योगदान देने की।

चिरत्र निर्माण करने वाले दैवी तत्त्व भारतीय संस्कृति में भरे पड़े हैं। जिस संस्कृति का जीवन दर्शन व्यक्ति के लौकिक एवं पारलौकिक कल्याण को सिद्ध करता हो, जो 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' एवं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के आदर्शों की सीख देता हो, जो धर्ममय अर्थ एवं काम के आधार पर मोक्ष का मार्ग दिखाता हो, पूर्णता का पथ प्रशस्त करता हो, जिसमें सेवा और त्याग के आदर्श—संस्कारों में घुट्टी की तरह पिलाए जाते हों, उसके लिए चिरत्र निर्माण मानवीय विकास की सहज स्फूर्त प्रक्रिया रही है।

वेदों का स्पष्ट आदेश है कि 'ऋतस्य पथां प्रेत' अर्थात सत्य और पिवत्र मार्ग पर चलो। वेदों में प्रार्थना के स्वर स्पष्ट हैं कि मेरे जीवन यज्ञ के अग्रणी अग्निदेव! मुझे

दुश्चिरित्र से सब ओर से बचा और सुचिरित्र में मेरी प्रीति और भिक्त हो। मैं उसी का सेवन करूँ। देवों और देवोपम मानवों का अनुसरण कर मैं अपने जीवन में उत्थान के मार्ग पर अग्रसर होऊँ और फिर जीवन के उच्च स्तर पर प्रतिष्ठित होऊँ।

पूरे भारत को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में आबद्ध करने वाले आदि शंकराचार्य के शब्दों में चिरित्र, शील और सदाचार पर्यायवाची शब्द हैं। यही चिरित्रनिष्ठा किसी भी व्यक्ति के जीवन को मूल्यवान बनाती है, श्रद्धापात्र बनाती है।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार विद्वान अपनी विद्वत्ता से प्रशंसा का पात्र हो जाता है, परंतु चिरत्रवान मनुष्य अपने चिरत्र के आदर्श द्वारा लोगों का श्रद्धाभाजन बनकर अपने प्रति आदरभाव उत्पन्न कर उनके हृदय में प्रतिष्ठित हो जाता है।

इसीलिए भगवद्गीता हर जिम्मेदार एवं विचारशील व्यक्ति को श्रेष्ठ आचरण के लिए कहती है; क्योंकि श्रेष्ठ पुरुषों के आचरण के अनुसार ही अन्य पुरुष बरतते हैं तथा वे उन्हीं के आदर्शों का अनुगमन करते हैं और कीर्ति में धब्बा लगना भारतीय संस्कृति के अनुसार मृत्यु से बढ़कर समझा जाता है। इसीलिए चरित्रनिष्ठा का भाव भारतीय संस्कृति में अग्निज्वाल की भौति धमनियों में प्रवाहित होता रहा है—जिसकी अनिगनत, मिसालें हर युग में जनमानस को श्रेष्ठता के पथ पर बढ़ने के लिए प्रेरित करती रही हैं।

इसी आधार पर मनुस्मृति के अनुसार इस आर्यावर्त में उत्पन्न मनुष्य अपने चिरित्र के कारण संसार के लोगों के आदर्श होते थे। रामायण में चारित्रिक रूप से अनुकरणीय तमाम आदर्श पात्र मिलते हैं। पिता के रूप में दशरथ, माता के रूप में कौशल्या, पुत्र के रूप में श्रीराम एवं श्रवण कुमार, भाई के रूप में लक्ष्मण, भरत और पत्नी के रूप में माता सीता। सब चारित्रिक दृष्टि से अपने व्यक्तित्व की अप्रतिम छाप छोडते रहे हैं।

वाल्मीकि रामायण में वर्णित है कि अयोध्या में एक भी कामी यानी दुराचारी, कंजूस, क्रूर, अशिक्षित और नास्तिक

**००००००००००००००००० ⊳**'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **∢००००००००००००००००** 

फरवरी, 2022 : अखण्ड ज्योति

पुरुष नहीं दिखाई देता था। सबके सब स्त्री-पुरुष धार्मिक, संयमी, सदाचारी, प्रसन्न और निर्मल हृदय थे। कोई गृहस्थ अग्निहोत्रादि नियमों का पालन न करने वाला, क्षुद्रवृत्ति, चोर, दुराचारी और व्यभिचारोत्पन्न अयोध्या नगरी के अंदर न था।

सब अयोध्यावासी ज्ञानसंपन्न, पवित्र और मिलकर विचार करने वाले थे। उस सारे अयोध्या नगर में ही नहीं, सारे राष्ट्र में भी कोई असत्यवादी पुरुष नहीं था। कहीं दुष्ट और व्यभिचारी परस्त्री संग करने वाला पुरुष तक वहाँ दिखाई न देता था। इस प्रकार अयोध्या का नगर और सारा राष्ट्र अत्यंत शांति से युक्त एवं अपराध से मुक्त था।

दर्शन के चरमोत्कर्ष काल में छांदोग्य उपनिषद में ऋषि के स्वर चरित्रनिष्ठा के आदर्श को मुखरित करते हुए कहते हैं-मेरे देश में कहीं कोई चोर, कृपण, मद्यपानी, दैनिक अग्निहोत्र न करने वाला, मूर्ख और स्वेच्छाचारी व्यक्ति निवास नहीं करता. फिर स्वेच्छाचरण करने वाली स्त्री तो भला हो ही कैसे सकती है।

यही भावप्रवाह इतिहास के स्वर्णिम पलों में विद्यमान था जब पश्चिम, भारत से आशा भरी दृष्टि से कुछ सीखने व पाने की इच्छा से पधार रहा था। लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व 303 ई०प्० मौर्यकाल में सेल्युकस ने सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के शासन में अपना राजदूत मैगस्थनीज पाटलिपुत्र भेजा था। उसने अपनी पुस्तक इंडिका में लिखा है—यहाँ के लोग अपने घरों में ताला लगाने की प्रथा से अपरिचित थे। उनका ज्ञान, वैभव अद्भुत गौरवशाली था। भारतीय समाज के छोटे वर्ग में भी सर्वत्र ईमानदारी भरी पडी थी।

629 ई० में चीनी यात्री ह्वेनसांग भारत पधारे और उनके शब्दों में—भारतवासी बडे सत्यवान और प्रतिष्ठावान होते हैं। वे पाप-पुण्य का सदा ध्यान रखते हैं। उनका व्यवहार मधुर और नम्र होता है। देश में अपराधियों और विद्रोहियों की संख्या बहुत कम है। जब कोई व्यक्ति कानून भंग करता है तो उसके विरुद्ध तत्काल कार्रवाई की जाती है। इसी तरह गुप्तकाल में अन्य चीनी यात्री फाह्यान ने भारत में नागरिकों की उच्च चरित्रनिष्ठा का वर्णन किया है।

औरंगजेबकालीन इतिहासकार शफी खाँ शिवाजी 

शिवाजी मराठा ने यह नियम बना रखा था कि जहाँ कहीं भी उनके सिपाही युद्ध के दौरान पहुँचें, वहाँ किसी मसजिद या खुदा की किताब या किसी स्त्री को हानि न पहुँचाएँ। जब कभी पवित्र कुरान की कोई प्रति उनके हाथ में आ जाती थी तो वे उसे आदर से रखते थे और अपने किसी मुसलमान अनुचर को दे देते थे। इसी तरह शिवाजी के सभी सैनिक तथा शिविर चरित्र संबंधी सभी दोषों से मक्त थे। विजित प्रदेशों की स्त्रियों को वे छते तक न थे। शास्त्रों में वर्णित 'मातुवत् परदारेषु' का आदर्श यहाँ जीवंत था।

महाभारत के उद्योग पर्व, 132/17 में स्पष्ट वर्णन है कि शासक के चरित्र के उत्थान या पतन से ही किसी राष्ट की नैतिकता या अनैतिकता, त्याग एवं तपस्या का पता चलता है। राजा या प्रशासक जब पापी होता है, तब प्रजा पापिष्ठ हो जाती है और जब धर्मनिष्ठ होता है, तब प्रजा भी धार्मिक हो जाती है।

परमात्मा के बनाए सभी दिन समान रूप से शुभ एवं पवित्र है। इनमें शुभ अथवा अशुभ का आरोपण मनुष्य स्वयं अपने विचारों से कर लेता है।

यहाँ 'यथा राजा तथा प्रजा' की उक्ति चरितार्थ होती है। कवि शिरोमणि कालिदास के शब्दों में-जहाँ अपूज्य पुरुषों की पूजा होती है और पूज्य पुरुषों की पूजा में विघ्न उत्पन्न होता है तो वहाँ अकाल, मृत्यु एवं भय तीन चीजें होती रहती हैं।

भारत ने ऐसे ही चारित्रिक दृष्टि से दूरदर्शिताहीन एवं निर्बल शासकों के कारण दासता का सदियों लंबा पीड़ादायक गुलामी भरा त्रासदीपूर्ण दौर देखा, लेकिन अब परिस्थितियाँ बदल रही हैं। भारत पुन: अपनी सांस्कृतिक गौरव-गरिमा के साथ विश्वपटल पर प्रतिष्ठित होने की राह पर अग्रसर है। चरित्रनिष्ठा का सनातन प्रवाह पुन: हमारी धमनियों में प्रवाहित हो रहा है। सौभाग्यशाली हैं वो सभी सुजनसैनिक, जो देव संस्कृति के संवाहक बनकर इस पुनीत कार्य में लगे हैं और सांस्कृतिक नवनिर्माण की



फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

भगवदुउपासना, जप, ध्यान, स्वाध्याय अवश्य करें। प्रारंभ में उपासना करते हुए मन में इधर-उधर के ढेर सारे विचार आते-जाते रहेंगे. पर इनसे घबराना नहीं है। विचारों की आँधी तो मन में आती-जाती रहेगी। जब वर्षों से बंद किसी घर को खोला जाता है और उसमें झाड़ लगाई जाती है तब धूल फर्श से ऊपर उठकर ऊपर तक फैल जाती है, पर इससे झाड़ लगाना बंद तो नहीं कर दिया जाता। हाँ, धीरे-धीरे धुले जैसे ही कम होती जाएगी, धुल उडना भी कम होता जाएगा।

''वैसे ही उपासना करते हुए, ध्यान करते हुए, जप करते हुए प्रारंभ में मन में कई प्रकार के विचारों का प्रवाह उमड़ता रहेगा। कई विचार तो हमारे अचेतन मन में दबे हुए कर्म-संस्कारों, अतृप्त इच्छाओं, वासनाओं आदि के कारण होते हैं और कुछ विचार हमारे वर्तमान जीवन में हमारे द्वारा किए जा रहे शुभ-अशुभ, अच्छे-बुरे कर्मों से प्रेरित होते हैं।

''उपासना में, ध्यान में, जप में, स्वाध्याय में नियमित रहने से हमारे चेतन व अचेतन, दोनों का परिष्कार होने लगता है और मन विचारों से मुक्त होकर शून्यावस्था को प्राप्त होता है। मन की वृत्तियाँ, चित्त की वृत्तियाँ समाप्त होने लगती हैं और फिर उसी शुन्यावस्था, चित्त की शुद्ध अवस्था में, मन की पवित्र अवस्था में हमारी आत्मा में परमात्मा का ज्ञान प्रकट होता है और परमात्मा का अंश होने के कारण ही आत्मा से ही दिव्य ज्ञान व आनंद प्रकट होने लगते हैं।

''हर व्यक्ति चाहता है कि उसे दु:ख से मुक्ति मिले व सुख की प्राप्ति हो। साधारण व्यक्ति को लगता है कि सुख प्राप्त करने के लिए बाहरी मार्ग ही है, भौतिक सुख-साधन ही हैं, पर भगवद्उपासक, भगवद्भक्त को भगवद्उपासना करते-करते अंतत: यह अनुभव होने लगता है कि सुख और आनंद का स्रोत, आनंद का अक्षय स्रोत उसके अंदर स्थित आत्मा और परमात्मा ही हैं।

''अस्तु भगवद्उपासना व योगाभ्यास करते-करते अनायास ही वैराग्य भाव जागने लगता है, बाह्य विषयों के प्रति आसक्ति व लगाव मिटने लगता है और उपासक के हृदय में भगवान के प्रति परम आसक्ति, परम अनुराग, परम प्रेम पनपने लगता है।

''दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हम अपने जीवन में बरे कर्म, अशुभ कर्म न करें; क्योंकि ऐसा करने से मन

मिलन होता है और उपासना में मन नहीं लगता: क्योंकि बार-बार हमारे द्वारा किए गए बुरे कर्म, अशुभ कर्म के विचार हमें उपासना की गहराई में, ध्यान की गहराई में उतरने में बाधाएँ पैदा करते हैं और ब्रे कर्मों के ब्रे फल भी भोगने ही पड़ते हैं।

''हम सदा दूसरों का भला करें, दूसरों के लिए भला सोचें तो इससे चित्त-शृद्धि भी होगी, मन पवित्र भी होगा, दूसरों का भला करने का सुख भी प्राप्त होगा और स्वयं के जीवन में भी शुभ होगा; क्योंकि जो दूसरों का भला करता है या भला चाहता है, ईश्वर उसका भला अवश्य करता है।

''इसके साथ ही जीवन में समय-समय पर दिव्य तीर्थ क्षेत्रों का दर्शन व सेवन भी किया करें। जीवन में गृहस्थ आश्रम की जिम्मेदारियों से मुक्त होकर कभी-कभी प्रकृति की सुरम्य वादियों में भी प्रवास करें। इससे प्रकृति की निश्छलता, निष्कपटता भी स्वयं के भीतर आने लगेगी।

''सिद्ध-योगियों की तप:स्थली पर जाने से व्यक्ति वहाँ पर संव्याप्त आध्यात्मिक ऊर्जा से ओत-प्रोत हो उठता

## यौवन का अर्थ है ऐसी युवा मन:स्थिति, जिसमें सदा उत्साह, उमंग उमड़ते हों।

है। अत: कभी-कभी ऐसे दिव्यस्थलों का भ्रमण व वहाँ प्रवास करने का प्रयास करें। इससे साधना में, ध्यान में, भक्ति में गति आएगी और आप फिर गृहस्थ आश्रम में रहते हुए वह सब प्राप्त कर सकेंगे, जिसके लिए यह देवदुर्लभ मनुष्य तन प्राप्त हुआ है।''

संत प्रवर ने उस एक प्रश्न के उत्तर में ही मानो वहाँ उपस्थित सभी लोगों के मन में सहज रूप से उठने वाले प्रश्नों का समाधान कर दिया। सबने संत प्रवर को साष्टांग नमन किया और पुन: पधारने का आग्रह भी। सबके मन की जिज्ञासाओं का उचित समाधान हुआ और दुर्लभ मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ।

इस प्रकार लोगों को अपने अमृत उपदेश से नहलाने के पश्चात संत प्रेमदास जी वहाँ से कहीं अगले गंतव्य की ओर चल पड़े। संत प्रेमदास की जय-जयकार करते हुए लोग अपने मन में एक नए संकल्प, नई जीवन-दुष्टि व आध्यात्मिक जीवन जीने की दिव्य प्रेरणा लिए घर लौटे।

# पर्व विशेष ( अंतः करण को झकझार दे साहित्य, ऐसा चाहिए

महापुरुषों के जीवन प्रसंग सभी के लिए अनुकरणीय होते हैं। उनमें से भी वे महापुरुष जो संघर्षों, कठिनाइयों, अभावों की परिस्थितियों में अपने लिए स्थान नियत करते हैं—वे सभी के लिए आदरणीय बन जाते हैं। विपन्न और प्रतिकूल परिस्थितियों के मध्य जीवन की राहों को निर्धारित करने का कार्य निश्चित रूप से अविस्मरणीय व्यक्तित्वों के द्वारा ही संपन्न किया जाता है। महापुरुषों के जीवन का उद्देश्य ही ऐसी शिक्षाओं को अपने कृतित्व के माध्यम से सभी के लिए प्रस्तुत करना होता है। परमपूज्य गुरुदेव का जीवन एक ऐसे ही अलौकिक व्यक्तित्व का जीवन था।

एक बार परमपूज्य गुरुदेव से मिलने के लिए एक प्रसिद्ध लेखक आए। भारतीय इतिहास के वे एक सुप्रसिद्ध विद्वान थे और उनकी लिखी पाठ्यपुस्तकें अनेक विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम का एक अभिन्न अंग हुआ करती थीं, पर जैसा शास्त्रों में लिखा गया है—'मनीषिनस्तु भवन्ति, पावनानि न भवन्ति' अर्थात मनीषी तो कई होते हैं, परंतु वे पवित्र और पावन भी हों, ऐसा जरूरी नहीं।

उनके स्वयं के साथ भी कुछ ऐसी ही बात थी, पर अच्छी बात यह थी कि वे स्वयं की इस सीमितता से परिचित भी थे। किसी आध्यात्मिक श्रेष्ठ व्यक्तित्व से जीवन बोध को प्राप्त करने का भाव उनके मन में कहीं गहरे से स्थापित था। यही सोचते हुए वे उस दिन पूज्य गुरुदेव से मिलने शांतिकुंज आए थे।

परमपूज्य गुरुदेव से मिलते ही उनको एक अलौकिक अनुभूति हुई। उन्हें लगा कि किसी वैदिककालीन ऋषि से उनकी मुलाकात हो रही है। पूज्य गुरुदेव की समीपता में उनको ऐसे सात्त्विक वातावरण का बोध हुआ कि उनकी आँखों से आँसू झरने लगे। ऊपर से पूज्य गुरुदेव की आत्मीयता ने उनको और भी ज्यादा भावविभोर कर दिया। बहुत सारे प्रश्न वे मन में सोच करके आए थे—उनसे अब उनको पूछ पाना भी संभव नहीं हो पा रहा था।

उनके मन के भावों को पढ़ते हुए परमपूज्य गुरुदेव ने कहना आरंभ किया। वे बोले—''बेटा! तुमको भगवान ने विशिष्ट प्रतिभा देकर के भेजा है। इसका उपयोग समाज को सही दिशा देने में लगाना। बुद्धिमत्ता अकेली काफी नहीं होती, इसके साथ अंतर्निहित शक्तियों का परिशोधन भी आवश्यक होता है। उसकी शुद्धि के बाद जब उच्चस्तरीय, उत्कृष्ट चिंतन निखरकर आता है तो उसके माध्यम से सृजा गया साहित्य, जीवन की समस्त विकृतियों का निराकरण कर पाने की सामर्थ्य रखता है। तुम अपने जीवन को इसी दिशा में लगाना, ताकि नवयुग के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ तैयार हो सकें।"

नवयुग के विषय में सुनकर उनके मन में जिज्ञासा जगी और उन्होंने पूज्य गुरुदेव से पूछा—''गुरुदेव! नवयुग के निर्माण में साहित्य किस तरह से भूमिका निभा सकता है?'' पूज्य गुरुदेव अविलंब बोले—''बेटा! नवयुग जब भी आएगा तो आएगा वह विचारों के शोधन से ही। आने वाले समय की क्रांति लहू और लोहे की नहीं, बल्कि विचारों के परिवर्तन की क्रांति होगी। सतयुग के समाज का निर्माण सद्विचारों की प्रतिष्ठा से ही संभव है। तुम खुद सोचकर के देखो कि आज साहित्य के नाम पर कैसे कुत्सित विचारों की भीड़ बाजार में उपलब्ध है? क्या कारण है कि जो लेखनी अंत:करण को पवित्र बनाने वाले विचारों का माध्यम बन सकती थी—वह निषेधात्मक चिंतन, क्रोधित कर देने वाले भावों और कुत्सित व दिमत कामनाओं को भड़काने का कार्य करती है?''

परमपूज्य गुरुदेव द्वारा कहे जा रहे सत्य को नकार पाना उनके लिए संभव न था। वे खुद भी साहित्य के इस विकृत स्वरूप को देखकर शुब्ध थे, व्यथित थे। मन-ही-मन वे सोचने लगे कि गुरुदेव बिलकुल सही कह रहे हैं। इस संसार में कई ऐसी रचनाएँ आज रची जा रही हैं, जो मात्र कलह, द्वेष, क्रोध, आक्रोश, कामुकता को भड़काने का कार्य करती हैं।

यदि उन्होंने विधेयात्मक चिंतन को जन्म दिया होता, सत्साहित्य रचा होता तो कोई कारण नहीं है कि एक सार्थक परिणाम नहीं निकल करके आया होता। कार्ल मार्क्स के चिंतन ने पूँजीवाद के किले को गिरा दिया, हैरियट स्टो के एक उपन्यास ने रंगभेद पर कड़ा प्रहार किया तो फिर क्या आज की परिस्थितियों में ऐसा कर पाना संभव नहीं है?

उनके मन में जन्म लेते वैचारिक प्रवाह को अनुभव करते हुए पूज्य गुरुदेव बोले—''बेटा! तुम सही सोच रहे हो। बुद्ध के द्वारा प्रदत्त विचारक्रांति, गांधी-पटेल द्वारा प्रदत्त स्वतंत्रता आंदोलन की क्रांतियाँ—उसी अलौकिक वैचारिक शक्ति का प्रतीक हैं, जिन्होंने तत्कालीन समय के प्रवाह को दिशा देने का महती कार्य संपन्न कर दिखाया। ऐसा थोड़े ही है कि यह करने के लिए उन्होंने कोई विचारोत्तेजक साहित्य रचा हो? नहीं। पर उन्होंने इनसान के अंत:करण को झकझोरने का कार्य किया। मात्र वो करने से ही समाज की दिशा को बदल पाना संभव है।''

थोड़ा रुककर पूज्य गुरुदेव आगे बोले—''जो पहले घट चुका है, वो आज भी संभव है। आज का समय भी एक ऐसी ही विचारक्रांति की माँग करता है और साथ ही यह जरूरी भी है कि एक ऐसी क्रांति जन्म ले। आज की विषम परिस्थितियों में यह एक अनिवार्यता बन चुकी है। वैभव

और विनाश के झूले में झूल रही मानवता को उबारने के लिए उनकी आस्थाओं के मर्मस्थल तक पहुँचना होगा और मानवीय गरिमा को उभारने वाला, दूरदर्शी विवेकशीलता को जगाने वाला प्रचंड पुरुषार्थ संपन्न कर दिखाना होगा। आज के समय की सबसे बड़ी आवश्यकता और चुनौती यही है कि लोकचिंतन को सही दिशा देने के लिए एक ऐसा विचारप्रवाह खड़ा किया जाए, जो किसी भी स्थिति में अवांछनीयता को टिकने ही न दे।''

पूज्य गुरुदेव के कहे गए शब्द उन सज्जन के हृदय को अंतरंग से मथ रहे थे, उन्हें कुछ नया व अच्छा करने के लिए प्रेरित भी कर रहे थे। मन-ही-मन वे सोच रहे थे कि आज के विकृत वातावरण को बदलने के लिए युगांतरकारी प्रयत्न को करने की जरूरत है। उनके मन के विचार, उस वसंत पंचमी की उनकी गुरुदेव से हुई मुलाकात को आधार बनाते हुए एक संकल्प का रूप धारण कर रहे थे। निश्चित रूप से उनके मध्य घटा वो वार्तालाप आज की परिस्थितियों में भी एक वैसे ही प्रयास की माँग करता है, जो मानवीय अंत:करण की पवित्रता को उभारने के दैवी संकल्प को पूरा कर सके।

बाबा राघवदास उन दिनों गाँव-गाँव घूमकर लोगों को स्वच्छता हेतु जागरूक करते। उन दिनों कितने ही गाँव महामारियों की चपेट में आ गए थे। वे एक गाँव में अपने साथियों के साथ पहुँचे। उन्होंने वहाँ ग्रामीणों को सफाई का महत्त्व बताया और स्वयं भी उस गाँव में सफाई करना शुरू किया। ऐसा करते महीनों व्यतीत हो गए, परंतु वहाँ के ग्रामीणों के जीवन में कोई अंतर नहीं आया। एक दिन एक कार्यकर्त्ता बाबा से पूछ ही बैठा—''बाबा! आपको इन ग्रामीणों को सफाई का महत्त्व बताते और स्वयं सफाई करते महीनों बीत गए, परंतु इनके स्वभाव में तिनक भी परिवर्तन नहीं आया। आप कब तक इन गँवारों को बदलने का प्रयास करते रहेंगे?'' बाबा बोले—''भाई! इतने में ही घबरा गए। जिन ग्रामीण जनता की हमने इतनी उपेक्षा की, उन्हें वर्षों अज्ञान के अंधकार में भटकाए रखा, उनमें संस्कार निर्माण करने के लिए उतनी ही प्रतीक्षा भी करनी पड़ेगी। निस्स्वार्थ भाव से धैर्यपूर्वक सेवा करने पर उनमें स्वच्छता का संस्कार अवश्य ही पैदा होगा।'' यही हुआ। एक वर्ष के अंदर वे उस आस-पास के सौ गाँवों को अपना कार्यक्षेत्र बनाकर, उन्हें सुसंस्कारी बना सकने में सफल हुए।



फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

वह प्रकट होती है। इसी प्रकार सर्वत्र व्याप्त भगवान भी प्रेम से प्रकट होते हैं। मेरे द्वारा कही गई यह बात सबको प्रिय लगी और ब्रह्मा जी ने 'साधु-साधु' कहकर बड़ाई की।

वस्तुत: निर्गुण, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी ब्रह्म अपने संकल्प मात्र से या धर्म की स्थापना हेतु या फिर अपने भक्तों की आकुल पुकार पर प्रकट होते हैं। अव्यक्त होते हुए भी वे व्यक्त होते हैं। अशरीरी होते हुए भी वे मनुष्य शरीर में अवतार लेते हैं, पर वे माया और उसके सत्, रज, तम आदि गुणों और बाहरी तथा भीतरी इंद्रियों से भी परे हैं। उनका शरीर भी दिव्य एवं उनकी अपनी इच्छा से ही बना होता है। किसी कर्मबंधन से परवश होकर त्रिगुणात्मक भौतिक पदार्थों के द्वारा नहीं। अस्तु यदि हम भी उस अव्यक्त परब्रह्म को अपने अंतस् में व्यक्त होते हुए अनुभूत करना चाहते हैं तो हमें भी आत्ममंथन करना होगा। इंद्रियातीत, इंद्रियों से परे परब्रह्म की अनुभूति इंद्रियों की दासता व बंधन में रहते हुए नहीं, बल्कि उससे परे होकर ही की जा सकती है। परमात्मा की अनुभूति, ब्रह्मानुभूति आत्मा से ही, आत्मा के द्वारा ही हो सकती है।

इसलिए योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं कि जो पुरुष इंद्रियों के समुदाय को भली प्रकार वश में करके मन-बुद्धि से परे, सर्वव्यापी और सदा एक रस रहने वाले, नित्य, अचल, निराकार, अविनाशी, सिच्चदानंदघन ब्रह्म को निरंतर एकीभाव से ध्यान करते हुए भजते हैं, वे योगी मुझको ही प्राप्त होते हैं, पर हाँ! उन सिच्चदानंदघन निराकार ब्रह्म में आसक्त चित्त वाले पुरुषों के साधन में परिश्रम विशेष है; क्योंकि देहाभिमानियों के द्वारा अव्यक्त विषयक गित दु:खपूर्वक प्राप्त की जाती है, परंतु जो मेरे परायण रहने वाले भक्तजन संपूर्ण कर्मों को मुझमें अर्पण करके मुझ सगुण रूप परमेश्वर को ही अनन्य भक्तियोग से निरंतर चिंतन करते हुए भजते हैं। उन प्रेमीभक्तों का मैं शीघ्र ही मृत्युरूप संसार-समुद्र से उद्धार करने वाला होता हूँ।

इसलिए हे अर्जुन! तू मुझमें मन को लगा और मुझमें ही बुद्धि को लगा, इसके उपरांत तू मुझमें ही निवास करेगा, इसमें कुछ भी संशय नहीं है, पर हाँ! यदि तू मन को मुझमें अचल स्थापन करने के लिए समर्थ नहीं है तो हे अर्जुन! तू मेरे नाम और गुणों का श्रवण, कीर्तन, जप व भगवत्प्राप्ति विषय-शास्त्रों का पठन-पाठन आदि चेष्टाएँ व अभ्यास के द्वारा मुझको प्राप्त होने के लिए इच्छा कर, पर यदि तू उपर्युक्त

अभ्यास में भी असमर्थ है तो केवल मेरे लिए कर्म करने के ही परायण हो जा। इस प्रकार मेरे निमित्त कर्मों को करता हुआ भी मेरी प्राप्तरूपी सिद्धि को ही प्राप्त हो गया। यदि तू इस साधन को करने में भी असमर्थ है तो मन-बुद्धि आदि पर विजय प्राप्त करने वाला होकर सब कर्मों के फल का त्याग कर; क्योंकि ध्यान से भी सब कर्मों के फल का त्याग कर; क्योंकि ध्यान से भी सब कर्मों के फल का त्याग श्रेष्ठ है और त्याग से तत्काल ही परम शांति प्राप्त होती है।

गीता (7/16-18) में भगवान कहते हैं कि सांसारिक पदार्थों के लिए भजने वाले, संकट निवारण के लिए भजने वाले, मेरे को यथार्थ रूप से जानने की इच्छा से भजने वाले एवं सदा ज्ञान में स्थित रहकर मुझे भजने वाले ज्ञानी भक्त— ये चार प्रकार के भक्त मुझे भजते हैं। पर इन चार प्रकार के भक्तों में मुझमें नित्य एकीभाव से स्थित अनन्य प्रेम-भिक्तवाला ज्ञानीभक्त अति उत्तम है और वह मुझे अतिशय प्रिय है। ज्ञानीभक्त मुझसे निष्काम प्रेम करता हुआ सदा मुझमें ही स्थित है और वह साक्षात् मेरा स्वरूप ही है, ऐसा मेरा मत है।

कहने का तात्पर्य यह है कि निष्काम, निश्छल प्रेम से परब्रह्म को, अपनी आत्मा में प्रकट किया जा सकता है। अव्यक्त ब्रह्म को अपनी आत्मा में व्यक्त होते अनुभव किया जा सकता है। इसलिए साधक को चाहिए कि वह संपूर्ण इंद्रियों को वश में करके सभी प्रकार से परमात्मा के परायण होकर, परमात्मा के प्रेम में डूबकर अपनी आत्मा में परमात्मा का निरंतर ध्यान करता रहे, परमात्मा से निरंतर निष्काम प्रेम करता रहे और इस संसार में रहते हुए सदा स्वयं को परमात्मा के हाथों का यंत्रमात्र बनाए रखे।

इस प्रकार की गई निरंतर साधना से साधक स्वयं की आत्मा में ही अव्यक्त ब्रह्म को व्यक्त होते हुए अनुभव कर सकता है। हाँ! प्रारंभ में इंद्रियों की चपलता, चित्त की चंचलता, भगवद्ध्यान, भगवत्प्रेम में विघ्न अवश्य डालती है, पर भगवद्ध्यान, भगवत्प्रेम, भगवद्भिक्त में निरंतरता रहने से इंद्रियों की चपलता, मन की चंचलता व मिलनता धीरे-धीरे अपने आप मिटने लगती है और साधक इंद्रियों से परे होकर, सत्, रज, तम के प्रभाव से परे होकर अपने भीतर इंद्रियातीत अव्यक्त ब्रह्म की अनुभूति करने लगता है।

वह उस समय अपने अंदर अंतर्निहित ब्रह्म के प्रत्यक्ष चैतन्यस्वरूप की अनुभूति करने लगता है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्यक्ष चैतन्य का साक्षात्कार इंद्रियों के निरोध

अर्थात निरुद्ध मन के द्वारा समाधि की अवस्था में सत-चित्-आनंद रूप में होता है। उस समय इंद्रियाँ निश्चेष्ट हो जाती हैं. मन ठहर-सा जाता है और तभी साधक को ब्रह्म की अनुभूति होती है; क्योंकि चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाने से अर्थात मन के सब प्रकार के संकल्पों से शुन्य हो जाने से, सारी इंद्रियाँ निर्व्यापार हो जाती हैं; क्योंकि हमें दुश्य जगत की प्रतीति विभिन्न इंद्रियों के द्वारा होती है, किंतु ये इंद्रियाँ अर्थात चक्ष, श्रोत्र, घ्राण, रसना और त्वचा मन के सहयोग के बिना व्यापार नहीं करतीं।

लिए यह दुश्य जगत् अदृश्य हो जाता है और बाह्य प्रपंच के अदृश्य हो जाने पर उससे इतर अविनाशी प्रत्यक्ष चैतन्य की उपलब्धि होती है अर्थात बाह्य आवरण के दृष्टि के सामने से हट जाने पर भीतर की सार वस्तु प्रकट हो जाती है। वस्तुत: साधक की यह अवस्था ही मोक्ष की अवस्था है, मुक्ति की अवस्था है, निर्वाण की अवस्था है, कैवल्य की अवस्था है। आत्मसाक्षात्कार व ब्रह्म-साक्षात्कार की परम अवस्था है। चाहें तो सच्ची साधना से हम भी इस उपलब्धि को, इस अवस्था को प्राप्त हो सकते हैं, इसमें कोई संशय

जाता है-तब इस दृश्य जगत में रहते हुए भी साधक के

इसलिए मन के निरुद्ध होते ही अन्य सारी इंद्रियाँ निर्व्यापार हो जाती हैं. जिससे बाह्य प्रपंच दिखना बंद हो

एक बड़े प्रदेश के मंत्री थे। वे अच्छे चिंतक एवं प्रभावी वक्ता थे, परंतु उनका चिंतन एवं व्यक्तित्व बड़े ही विकृत थे। तब भी समाजसेवा एवं सुधार के लिए स्वयं को प्रतिबद्ध बताने में संकोच न करते। कोई पूछता तो वे कहते—''हम जनता के विचारों को जाग्रत एवं परिमार्जित करते हैं। उन्हें ठीक दिशा दिखाना और उस पर चलने की प्रेरणा देना हमारा काम है।'' एक बार वे एक गाँव में पहुँचे। वहाँ उन्होंने एक विख्यात संत की चर्चा सुनी तो वे भी दर्शन हेतु पहुँच गए। जाते ही साधु ने मंत्री जी को गोबर उठाकर लाने की आजा दी।

मंत्री जी साधु के इस व्यवहार से बहुत खिन्न हो गए, पर वे हँसकर उठे और किसी तरह गोबर उठा लाए। साधु बोले—''इसे यहीं रख दो और वह पुस्तक उठाकर ले आओ और उसे पोंछ दो।'' मंत्री जी बोले—''मैं हाथ धो लूँ महाराज? पुस्तक में गोबर लग जाएगा तो वह और भी गंदी हो जाएगी।'' साधु गंभीर स्वर में बोले—''एक किताब उठाने में तो तुम यह देखते हो कि गंदे हाथों से किताब गंदी हो जाएगी, किंतु इतने बड़े समाज के दोष दूर करने चले हो और तुम अपने अंतस् की गंदगी नहीं देखते हो ? इस गंदे मन के साथ तुम जहाँ भी जाते हो, उतनी ही बुराई फैलाते हो।'' मंत्री जी को साधु की महानता व अपनी क्षुद्रता का एहसास हो गया। पहले अपने दोष दूर करो, तब समाज के दोष दूर करने चलो। वस्तुतः आत्मसाधना ही समाजसेवा की कुंजी है।

**⋄⋄⋄⋄⋄⋄⋄⋄⋄⋄⋄⋄** ► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **⋖**०००००



अपने देश में छह ऋतुएँ होती हैं। ऐसा सुयोग विश्व में और कहीं नहीं है। इन छह ऋतुओं में वसंत को ऋतुराज कहते हैं। वसंत पंचमी का पर्व हर वर्ष अपने यहाँ माघ शुक्ल पंचमी को मनाया जाता है। संस्कृत साहित्य तो वसंत के गुणगायन से भरा पड़ा है। पिक्षयों का कलरव, आम्रमंजिरयाँ, मंद-मंद बहती बयार और वसंत ऋतु की सुवास अनायास सभी पर छा जाती है। जौ और गेहूँ की बालियाँ इस दिन भगवान के समक्ष अपित की जाती हैं। ब्रज-क्षेत्र में यह उत्सव विशेष उल्लास के साथ मनाया जाता है। वहाँ सृष्टि की गहराई को समझ पाने की दृष्टि के लिए माँ शारदा से विशेष निवेदन किया जाता है।

वर्तमान समय की परिस्थितियाँ परिवर्तित हैं। इसलिए अब यह कह पाना कठिन होगा कि वसंत पंचमी का उत्सव उन्हीं भावों के साथ मनाया जाता है या नहीं, परंतु फिर भी इतना तो मानना ही होगा कि अपने देश में अन्य ऋतुओं की तुलना में इस पर्व का विशिष्ट महत्त्व है। सरस्वती पूजन की परंपरा शायद वैदिककाल से चली आ रही है, क्योंकि संहिताओं के अध्ययन एवं पाठ के लिए यह दिन सबसे श्रेष्ठ माना गया है। सरस्वती के जन्म की कथा अनेक ग्रंथों में मिलती है। ब्रह्मा ने जब सृष्टि की रचना का संकल्प किया तो सात्त्विक चिंतन के क्षणों में उनके ललाट पर एक शृभ्र दीप्ति प्रदीप्त हुई।

कुछ समय बाद उस स्थान से एक नवजात कन्या अवतिरत हुई। ब्रह्मा ने पूछा—''तुम कौन हो?'' उस कन्या ने कहा—''मेरा जन्म आपके चिंतन से हुआ है। कृपया मुझे यथोचित स्थान दें और मुझे सेवा–भार सौंपें।'' ब्रह्मा ने सरस्वती से कहा—''तुम लोगों की जिह्ना में स्थान ग्रहण करो और वाक्शिक बनकर क्रियाशील रहो। वाक् से ही लोग वश में होते हैं और वाक् से ही एकदूसरे के शत्रु हो जाते हैं। मगर जो तुम्हारी अनेकानेक छवियों को पहचानेंगे, वे कवि–मनीषी आदि कहलाएँगे। यही नहीं तुम्हें पृथ्वी पर दिव्य एवं पावन नदी के रूप में भी प्रतिष्ठा पिलेगी।''

कालांतर में कुंभकर्ण की घोर तपस्या से ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर वरदान माँगने के लिए कहा। तब सरस्वती कुंभकर्ण की जिह्वा पर कुछ अधिक तीव्रता से क्रियाशील हो गईं। परिणाम यह हुआ कि सरस्वती के प्रभाव से कुंभकर्ण ने इंद्रासन की जगह निद्रासन माँगा। इसी तरह समुद्र में जो बड़वाग्नि है, उसे वहाँ पहुँचाने का काम भी सरस्वती ने किया। हुआ यह कि भार्गव और भौर्व ऋषि के बीच किसी विषय पर तीखी बहस हो गई। बहस का कारण भी सरस्वती ही थीं। इस तर्क-वितर्क का परिणाम यह हुआ कि एक लपट पैदा हुई। यह क्रोध था। इसका जन्म ब्रह्मा की पलकों से हुआ माना जाता है।

सरस्वती ने जब देखा कि जिह्वा से जन्मी तर्क ज्वाला से सभी कुछ नष्ट हो जाएगा, तो सरस्वती उस लपट को समुद्र के तल में दबा आईं। इसे ही बड़वाग्नि कहा जाता है। सरस्वती नदी के तट पर ही वेदव्यास के पुत्र ने परीक्षित को ज्ञान दिया था। पौराणिक कथाओं के अनुसार वसंत को कामदेव एवं देवी रित का पुत्र कहा गया है। रूप एवं सौंदर्य के देवता कामदेव के घर संतान पैदा होने से प्रकृति झूम उठती है, पेड़-पौधे उसके लिए नवपल्लव का पालना डालते हैं। फूल उसे वस्त्र पहनाते हैं। पवन झूला झुलाता है। कोयल उसे गीत सुनाकर बहलाती है। वसंत की महिमा अपार है। इसलिए भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है—ऋतुओं में मैं वसंत हूँ।

वसंत ऋतु में सरस्वती माता की पूजा की जाती है। वसंत को हम ऋतुराज कहते हैं। हमारे देश के किवयों ने वसंत की अभ्यर्थना में अनेक गीत गाए हैं। वेदों के पूजन का दिन भी यह माघ शुक्ल पंचमी है। वसंत माँ प्रकृति के विकास की ऋतु है। इसकी मिहमा का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि यह दिन पूरे देश में सरस्वती पूजा के रूप में मनाया जाता है। वैदिक साहित्य में वाणी (वाक्) की स्तुति अनेक ऋचाओं में विन्यस्त है। संस्कृत के अतिरिक्त पालि, प्राकृत ग्रंथों में भी वसंत की मिहमा का वर्णन किया गया है। इस विषय में एक किव ने लिखा है—

गयउ सिसिर वर्णातण दुहंतु।
महुमास मणोहरुइत्थपतु
गिरि मलय समीरणु पिरु
सरंतु भयणाग्नि विऊयहु विप्फुरंतु॥
ब्रजभाषा के कवि पद्माकर की निम्नलिखित पंक्तियों
से तो हम सभी परिचित होंगे ही—

कूलन में, केलि में, कछारन में, कुंजन में क्यारिन में किलत कलीन किलकंत है। बीथिन में, ब्रज में, नवेलिन में, बेलिन में बनत में, बागन में, बगरयो वसंत है॥

महादेवी वर्मा, जिन्हें हम आधुनिक मीरा की संज्ञा से अभिहित करते हैं, उन्होंने भी वसंत की अभ्यर्थना में लिखा है—

धीरे-धीरे उतर क्षिति से आ वसंत रजनी।
तारकमय नववेणी बंधन
शीशफूल शशि का कर नूतन
रिश्मवलय सितघन अवगुण्ठन
मुक्ताहल अविराम बिछा दे।
ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता कवि कुँअर नारायण ने
वसंत का उल्लेख इस प्रकार किया है—

संत का उल्लेख इस प्रकार किया है—
फूलों के चेहरे और तथाकथित चेहरे।
दौड़कर किसी ने बाँह गर्दन में डाल दी
छू गया वसंत की बयार का महक दुकूल।
ये मकान भी अजीब आदमी बने-ठने, तने-तने
न फूल हैं न पत्तियाँ, बेजबान मुँह असंख्य।

खिड़िकयाँ खुली हुई पुकारतीं। बस अंत आ बस अंत आ। धुल उड रही उधर जिधर तमाम भीड से लदी-फंदी सवारियाँ ग्र रहीं. उधर नहीं. तु उसी प्रसूनयुत छबील कुंज मार्ग से वसंत आ। समीप से सुगंधि रथ गुजर गए उचाट इस तरह कि हम अतिथि शुभागमन भूला गए यह बहार, एक ज्वार फूल फिर उलीच कर चली गई कोकिला कंठ से पुकारती वसंत आ गया गया, वसंत आ महाकवि निराला की कविताओं में बहती है वसंती

हवा—

सखि वसंत आया
भरा हर्ष वन के मन
नवोत्कर्ष छाया
किसलय-वसना नव-वय-लतिका
मिली मधुर प्रिय-उर तरु-पतिका,
मधुप-वृंद बंदीपिक-स्वर नभ सरसाया।

वसंत प्रकृति के उत्सव की ऋतु है। इस ऋतु में समस्त प्रकृति नर्तन, गायन एवं कीर्तन करती है। तन-मन झूम उठता है। भावना पुलकित हो उठती है। ऋतुराज वसंत हमारे जीवन को उमंगित एवं पुलकित करें।

एक दिन पंडित ताराचरण शास्त्रार्थ हेतु स्वामी दयानंद के पास पहुँचे। उस समय दयानंद जमीन पर एक आसन पर बैठकर कुछ लिख रहे थे। उन्होंने ताराचरण को अपने पास एक आसन पर बैठने को कहा। ताराचरण को अपनी विद्वत्ता का बहुत अभिमान था। वे स्वयं को स्वामी दयानंद से श्रेष्ठ मानते थे। उन्हें उनके साथ जमीन पर बैठने में अपना घोर अपमान महसूस हुआ। इसलिए वे खड़े ही रहे। स्वामी दयानंद उनके मनोभाव को ताड़ गए। उन्होंने कहा—''पंडित जी मात्र ऊँचे आसन पर बैठने से कोई महान नहीं होता। महानता तो त्याग, परोपकार, विनम्रता जैसे गुणों से तय होती है। व्यक्ति गुणों से महान बनता है, ऊँचे आसन पर बैठने से नहीं।'' स्वामी दयानंद की बात सुनकर पंडित ताराचरण लज्जित हो गए और उनकी बगल वाले आसन पर बैठ गए।

**४४४४४४४४४४४४४४४४४ ▶**'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **∢** 

फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति



मेल-मिलाप से मेला बन जाता है। विचारों का मिलाप अगर हो तो उसमें विभिन्न प्रकार के विचारों के व्यक्तियों से मिलने का, उनको समझने का अवसर मिलता है। इसमें दूर-दूर से आने वाले व्यक्ति अपनी सुविधा को छोड़कर एकजुट होते हैं। विरोधी और आपसी विपरीत अनुभूतियों में एक जैसा भाव जाग्रत करने के लिए इससे अच्छा अभ्यास भला और क्या हो सकता है। वैसे मिलने का मतलब योग भी होता है अर्थात जीवन कर्म की साधना करते हुए परमात्मा से मिलना।

यदि मेले का भाव समझ में आ जाए तो जीवन में सुख-दु:ख से उपराम हुआ जा सकता है। जीवन में सामंजस्य बिठाया जा सकता है। मन बड़ा चंचल है। मेले में चिलत क्षणों का मेल हो जाता है। अनेक प्रकार के दृश्य, विचार मिलते हैं, जिससे स्वाभाविक रूप से चंचल मन का संघटन हो जाता है। दार्शनिक भाषा में मेले को कहेंगे—क्षणिक या अस्थायी मिलन। एक दिन से लेकर अधिक-से-अधिक एक माह की मेले की परंपरा अपने देश में दिखाई देती है।

इसी तरह से जीवन भी एक मेला है। कोई 35 वर्ष के लिए आया है, कोई 50 वर्ष तथा कोई 75 या 90 वर्ष के लिए दुनिया में आया है। इन मेलों से यदि यही प्रेरणा लें तो जीवन में असंतुलन या असामंजस्य नहीं हो सकता है। यहाँ अलगाव है, फिर भी एकता है। आने वाले लोगों का पहनावा अलग, खान-पान अलग, रंग-रूप अलग, खाना बनाने की पद्धित भी अलग-अलग हैं, फिर भी परमात्मा का नाम लेते हुए पवित्र नदी में स्नान के समय मन, बुद्धि, शरीर सब पवित्र हो जाते हैं। एक होने पर कौन किससे राग करेगा, कौन किससे द्वेष?

संसार में सभी कुछ अपने मन के अनुकूल नहीं हो सकता है। अनुकूलताएँ विरल होंगी, कम होंगी, प्रतिकूलताएँ अधिक। वेदों का सार गीता को कहा गया है; क्योंकि उसमें जीवन को संतुलित बनाने के उपाय बतलाए गए हैं। जो व्यक्ति विपरीत परिस्थितियों में विचलित न हो, वही स्थितप्रज्ञ है, फिर वेश चाहे जो भी रहे। चाहे इंद्रपद मिल जाए अथवा पाँच घरों से भिक्षान्न प्राप्त कर जीवन-निर्वाह करना पड़े—दोनों ही स्थितियों में संतुष्ट रहने वाले, समान मानसिकता में जीने वाले को कोई विचलित नहीं कर सकता। परमहंस की अवस्था, जिसे ब्राह्मी स्थिति भी कहा गया है, उसमें जीवन के ये सभी विक्षोभ दूर हो जाते हैं, तभी मनुष्य को स्थायी शांति मिलती है।

धर्म मनुष्य का सहयोगी, साथी और मार्गदर्शक है, किंतु आध्यात्मिकता बहुत ऊँची अवस्था है, जिसका लक्ष्य परमात्मा है, आत्मानुभूति है—उसके सामने सुख-भोगों का कोई महत्त्व नहीं है। प्रभुप्रेमी की भावदशा ही विचित्र होती है। ऐश्वर्यशाली की, संपन्न की, प्राय: इंद्र के वैभव से तुलना की जाती है, परंतु इंद्र की स्थिति सदैव भय में रहती है। उसे सदैव इस बात की चिंता रहती है, यह भय रहता है कि उससे अधिक न मालूम किसका पुण्यफल उदित हो जाए और उसे इंद्रपद से अलग कर दिया जाए, परंतु आत्मिसंहासन पर बैठने वालों को कोई नहीं गिरा सकता है। आत्मबोध होने पर चाहे गृहस्थी हो, चाहे संन्यासी—वह कभी असंतुष्ट रह ही नहीं सकता है।

जो नहीं मिला है, उसको प्राप्त करने का भाव व्यक्ति के मन में असंतोष को जन्म देता है। जो मिला है, उसके प्रति संतुष्टि का भाव रखना ही उपासना है। जो आत्मिसंहासन पर विराजमान होकर निजात्मबोध के आनंद में मग्न है, उसके सामने इंद्रासन भी तृणवत् होता है। वह मन से स्थिर और अच्युत हो जाता है। जो जिस इष्ट की उपासना करता है, वह उस इष्ट से एकाकार हो जाता है। वास्तव में साधना पद्धतियाँ और कुछ नहीं, एक ही स्थान पर पहुँचने के भिन्न-भिन्न मार्ग हैं। इसलिए किसी को अपना इष्टदेव बदलने की आवश्यकता नहीं है। आदिशंकराचार्य ने पाँच उपासनाएँ प्रचलित की थीं—शिव, शक्ति, विष्णु, गणेश और सूर्य की। किसी दूसरे को दु:ख पहुँचाए बिना, अपने इष्ट की पूजा करने का सभी को समान अधिकार है।

उस हेतु बिलदान देते थे। संस्कृति और धर्म की रक्षा में तत्पर रहते थे, परंतु आज संस्कृति के उन्नयन की बात कोई नहीं करता है। धर्म के वृक्ष को श्रद्धा और विश्वास के जल से सींचकर पोषित-पल्लवित किया जा सकता है। वैराग्य का पुष्प लगने पर, मोक्ष का फल अपने आप लग जाता है। मोक्ष मरने के बाद नहीं, जीवित रहते हुए भी प्राप्त किया जा सकता है। हमारा भाव यही हो कि हमारी जितनी भी संपदा है, वह परमात्मा की शक्ति बन जाए। केवल संपत्ति ही नहीं, विपत्ति भी परमात्मा की वस्तु समझकर उसी को अपिंत करें तो संसार की कोई भी शक्ति हमको विचलित न कर सकेगी। घनघोर एवं भयावह संकट भी हमको डरा नहीं सकेंगे।

\*\*\*\*\*\*\*

हम सबको संपत्ति और विपत्ति में, सुख और दु:ख में एकरूपता, समानता की प्रतीति करनी ही चाहिए। यदि यह धारणा दृढ़ हो गई तो जीवन प्रभुमय बन जाएगा। जो व्यक्ति सुख-दु:ख में विचलित नहीं होता है, सबके प्रति समभाव रखता है, सभी में परम प्रभु की छवि देखता है— उसमें आध्यात्मिकता का अंकुरण होता ही है। अग्नि की, त्याग की प्रभा को प्रकट करने वाला यह संन्यासियों का वस्त्र यद्यपि महत्त्वपूर्ण है, परंतु वेश ही सभी कुछ नहीं होता है।

गृहस्थाश्रम में भी रहने वाला व्यक्ति यदि इस जीवनशैली को अपनाता है तो वह भी उसी कोटि का साधक माना जा सकता है। मनुष्य यह अनुभव करे कि यदि वह केवल परमात्मा से ही प्रेम करता है, केवल उसी के लिए उसका जीवन समर्पित है, तो वह सदा आनंदमग्न रह सकता है। आनंद केवल प्रभुचरणों में है। जीवन के इस मेले में केवल परमात्मा ही सर्वस्व हैं। इस विश्वास के दृढ़ होने पर ही वह जीवन में मुक्त हो जाएगा। जीवन परमात्मा का प्रवाह है। सचमुच परमात्मा प्रवाहित हो रहा है, जीवन के रूप में। संपूर्ण रूप से पवित्र, परिमार्जित एवं परिष्कृत है यह जीवन-पवाह।

भगवान ने श्रीमद्भगवद्गीता, 7/7 में कहा है— मिय सर्विमिदं प्रोतं सूत्रे मिणिगणा इव ॥ अर्थात मुझमें सब उसी प्रकार गुँथे हुए हैं, जैसे कि धागे में सभी मिणियाँ। प्रत्येक मिण के द्वारा धागे का स्पर्श ही प्रत्येक जीवात्मा का परमात्मा से संस्पर्श है। जीवन मेला भी कुछ ऐसा ही है। इसमें ऊपरी तौर पर तो भारी भेदभाव है, लेकिन भीतरी तौर पर उस सत्य की अनुभूति है, जिसमें हम सभी को इस महामेले में इकट्ठा किया गया है। यह अनुभूति हमें विसंगतियों में सुसंगति प्रदान करती है। दु:ख में सुख, अँधेरे में प्रकाश की खोज की राह भी तो यही है।

घर-परिवार की एकजुटता हो अथवा कुटुंबियों व संबंधियों की, समाज का मेल-मिलाप हो अथवा संस्कृतियों का सम्मिलन, बात अपने देश की जमीन तक सीमित न हो या फिर समूचे विश्व-वसुधा की—यह सब कुछ अपने जीवन मेले के ही विविध रूप हैं। मेला तो है ही उत्सव, राग, अनुराग, उल्लास का पर्याय। जो भी इस सच को जान लेता है, वह अपने जीवन को खुशियों से भर लेता है। आइए जीवनरूपी इस मेले का आनंद उठाएँ।

युग निर्माण के लिए अगले ही दिनों हमें अनेक रचनात्मक और संघर्षात्मक प्रिक्रियाएँ, हलचलें आरंभ करनी पड़ेंगी। उसके लिए ऐसे कर्मठ, भावनाशील, प्रितभाशाली और प्रबुद्ध व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ेगी, जो अपना सारा जीवन ही इस पुण्यप्रयोजन के लिए समर्पित करें और सारी विचारणा एवं आकांक्षा उसी केंद्र पर केंद्रीभूत कर दें। अपने आप को और अपने संकीर्ण स्वार्थों को भूलकर विश्व-मंगल के लिए अपने को उत्सर्ग करने में गर्व-गौरव का अनुभव करें। ऐसी प्रबुद्ध आत्माओं से रहित भारतभूमि नहीं है। वे हैं, उन्हें जगाया, उठाया और लगाया जाएगा।





हर पल आनंदित रहता है। भौतिक शरीर का परित्याग कर देने के बाद भी जीवात्मा एक अनुपम, अतींद्रिय व सच्चे सुख, शाश्वत सुख की अनुभृति करता है। यह मुक्ति का मार्ग किन्हीं विशिष्ट व्यक्तियों के लिए ही नहीं. अपित संसार के प्रत्येक प्राणी के लिए खुला हुआ है। केवल उसे सम्यक पुरुषार्थ करने की आवश्यकता है। हमारे लिए योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण का भी यही आह्वान है-

### कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेष कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भुमा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥

अर्थात तेरा कर्म करने में ही अधिकार है, उसके फल में कभी नहीं। इसलिए त कर्मों के फल का हेत मत हो तथा तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो।

निष्काम कर्म अर्थात कर्मयोग को स्पष्ट करते हुए भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि तू निरंतर आसक्ति से रहित होकर सदा कर्त्तव्य कर्म को भली भाँति करता रह: क्योंकि आसि के रहित होकर कर्म करता हुआ मनुष्य परमात्मा को प्राप्त हो जाता है। (गीता, 3/19)।

जनक आदि जानी जन भी आसक्तिरहित कर्म के द्वारा ही परम सिद्धि को प्राप्त हुए थे (गीता, 3/20)। जो मनुष्य समस्त कर्मों में और उनके फल में आसक्ति का सर्वथा त्याग करके संसार के आश्रय से रहित हो गया है और परमात्मा में नित्य तृप्त है, वह कर्मों में भली भाँति बरतता हुआ भी वास्तव में कुछ भी नहीं करता (गीता, 4/20)। जिसकी आसक्ति सर्वथा नष्ट हो गई है, जो देहाभिमान और ममता से रहित हो गया है-जिसका चित्त निरंतर परमात्मा के ज्ञान में स्थित रहता है. ऐसा केवल यज्ञ संपादन के लिए कर्म करने वाले मनुष्य के संपूर्ण कर्म भली भाँति विलीन हो जाते हैं (गीता, 4/23)। अस्तु भगवान श्रीकृष्ण के उपर्युक्त आह्वान व दिव्य संदेश का अनुसरण करते हुए हम भी क्यों न आसक्तिरहित कर्म करें, निष्काम कर्म करें; क्योंकि निष्काम कर्म ही कर्मबंधन से मुक्ति का मार्ग है। निष्काम कर्म ही कर्म योग है। निष्काम कर्म ही बंधनरहित कर्म है। निष्काम कर्म ही मुक्ति का मार्ग है।

्र एक गिद्ध था। उसके माता-पिता अंधे थे। गिद्ध प्रतिदिन अपने साथ-साथ अपने माता-पिता के भोजन की भी व्यवस्था जुटाता। एक दिन वह किसी बहेलिये के जाल में फँस गया। वह बेहद दु:खी हुआ कि मैं मर जाऊँगा तो माता-पिता का क्या होगा ? वह जोर-जोर से विलाप करने लगा। बहेलिये ने उसके रोने का कारण पूछा तो गिद्ध ने अपनी व्यथा कही। बहेलिया बोला— ''गिद्धों की दृष्टि तो इतनी तेज होती है कि सौ योजन ऊपर आसमान से भी देख लेती है, लेकिन तू जाल को कैसे नहीं देख पाया ?''गिद्ध बोला—''बुद्धि पर जब लोभ का परदा पड़ जाता है तो उसे ठीक-ठीक नहीं दिखाई देता। जीवनभर मांस पिंड के पीछे भागते-भागते मेरी नजर को अब उसके सिवाय कुछ और दिखाई ही नहीं देता। इसी कारण मैं तेरा जाल नहीं देख पाया।'' बहेलिये को गिद्ध की ज्ञानभरी बातें अच्छी लगीं। उसने कहा—''गिद्धराज! जाओ मैं तुम्हें मुक्त करता हूँ। अपने अंधे माता-पिता की सेवा करो। तुमने मुझे लोभ का दुष्परिणाम बतला दिया।''

एवं प्रसार किया, परंतु इस पंथ को संगठित एवं विकसित करने का श्रेय धर्मदास को ही है। कबीर के विचारों को व्यापकता प्रदान करने के लिए उन्होंने सर्वप्रथम ठोस कदम उठाया। उनके पश्चात उत्तराधिकारी आचार्यों के द्वारा कबीर पंथ एवं साहित्य को बल मिला।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को कबीर दास के जटिल व्यक्तित्व के सच को खोज निकालने का दुरूह और दुष्कर कार्य का श्रेय प्राप्त है। द्विवेदी जी द्वारा सच्चे अर्थों में कबीर की आत्मा खोज निकालना किसी आविष्कार से कम नहीं है। यही कारण है कि जहाँ एक ओर कबीर समाज में भी लोकप्रिय बने रहे तो वहीं दूसरी ओर सहज सर्वग्राह्य भी बने रहे। कबीर की वाणी वह लता है, जिससे योगक्षेत्र में भक्ति का बीज अंकुरित हुआ। कबीर के लिए साधना एक विकट संग्राम थी, जहाँ कोई विरला शूरवीर ही टिक सकता है।

कबीर मानव के द्वारा बनाए गए भेदों के बीच भी मानवीय रूप ही स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने अपने संवादों में मानवीय एकता का बीज बोया है, जो पल्लवित-पुष्पित होकर विश्व को मानवता की भावना से ओत-प्रोत करने में समर्थ है।

तर्कशास्त्र के विद्वान पंडित रामनाथ ने नवद्वीप के पास एक निर्जन वन में विद्यालय स्थापित किया था। उसमें वे विद्यार्थियों को शास्त्रज्ञान दिया करते थे। उस समय कृष्णनगर में महाराज शिवचंद्र का शासन था। उन्हें पता लगा कि परम विद्वान पंडित रामनाथ गरीबी में दिन काट रहे हैं तो उनकी सहायता के उद्देश्य से वे वहाँ पहुँचे। उन्होंने पंडित जी से पूछा—''मैं आपकी क्या मदद करूँ ?'' पंडित जी बोले—''भगवत्कृपा से मुझे कोई अभाव नहीं।'' राजा बोले—''मैं घर खरच के बारे में पूछ रहा हूँ।'' पंडित जी ने कहा—''इस बारे में तो गृहस्वामिनी ही अधिक जानती हैं, उन्हीं से पूछें।''

\*

राजा ने गृहस्वामिनी के पास जाकर पूछा—''माताजी! घर खरच हेतु कोई कमी तो नहीं है?'' उन परम साध्वी ने कहा—''महाराज! भगवद्भक्तों को क्या कमी हो सकती है?'' राजा बोले—''फिर भी माताजी!'' साध्वी बोलीं—''महाराज! कोई कमी नहीं है। पहनने को कपड़े हैं, सोने के लिए बिछौना है। खाने के लिए विद्यार्थी भोजन ले आते हैं। भला इससे अधिक की जरूरत भी क्या है?'' राजा ने आग्रह किया—''देवी! हम चाहते हैं कि आपको कुछ गाँवों की जागीरें प्रदान करें। इससे होने वाली आय से गुरुकुल भी ठीक तरह से चल सकेगा और आपके जीवन में भी कोई अभाव नहीं रहेगा।'' उत्तर में ब्राह्मणी मुस्कराते हुए बोलीं—''परमात्मा ने प्रत्येक मनुष्य को जीवनरूपी जागीर पहले से ही दे रखी है। जो जीवनरूपी जागीर को सँभालना सीख जाता है, फिर उसे कोई अभाव नहीं रहता।'' राजा निरुत्तर होकर लौट गए।

निराशा एक महाव्याधि है, जो व्यक्ति की संपूर्ण शक्तियाँ यं संभावनाओं को कुंद करके रख देती है। इसीलिए निराशा को शास्त्रों में पाष वताया गया है। जिससे स्वयं को आतंद निराशा को शास्त्रों में पाष वताया गया है। जिससे स्वयं को आतंद निराशा को शास्त्रों में पाष वताया गया है। जिससे स्वयं को आतंद निराशा को शास्त्रों में पाष वताया गया है। जिससे स्वयं को आतंद निराशा को शीधिक देर तक पालने में क्या समझदारी? जबकि उतसाह जीवन की संजीवनी है। वाल्सीकि रामाच्या में कहा गया है कि उतसाह में बड़ा बला होता है, उत्साह से बढ़कर अन्य कोई बला नहीं है। उत्साहो व्यक्ति के लिए संसार में कोई वस्तु दूर्लभ नहीं है। उत्साहो व्यक्ति के लिए संसार में कोई वस्तु दूर्लभ नहीं है। उत्साहो व्यक्ति के लिए संसार में कोई वस्तु दूर्लभ नहीं है। उत्साहो व्यक्ति के लिए संसार में कोई वस्तु दूर्लभ नहीं है। उत्साहो वाला है जो वहीं निराशा व्यक्ति को मृत्यु को ओर ले जाती है। इस परिवर्तनशील एवं सिराम से संव कुछ हमारे हिसाब से हो व ययावत् बना रहे. स्वारों के तामण व्यक्ति को अनस्य में आता हो। इस स्वारों को जोते हैं। वहीं निराशा व्यक्ति अनस्य में आता हो। इस स्वारों को को से जाता है। उत्साहों के लिए सब कुछ किंटन हो जाता है। उत्साहों के लिए सब कुछ किंटन हो जाता है। उत्साहों के लिए सब कुछ किंटन हो जाता है। उत्साहों के लिए सब कुछ किंटन हो जाता है। उत्साहों के लिए सब कुछ किंटन हो जाता है। उत्साहों के लिए सब कुछ कांटन हो आता है। उत्साहों के कां का पाया निराश के लिए सब कुछ कांटन हो जाता है। जाता है। उत्साहों के कां का पाया निराश के जाता है। इस राह जोता है। अत्या और अपना निराश के लिए सब कुछ कांटन हो जाता है। उत्साहों के कां जाता है। अत्या और अपना मान को लिए में जीवन सम्यागित करना एक बढ़ कोशल मान जोता सकता है। सिराश मान को लिए में जीवन सम्यागित करना एक वहातों है। उत्साह को भावन हो सुर हो हो तहां है। वहात को का जा सकता है। अत्या और कें आता मान को सकता है। सिराश के का का पाया मान हो हो हो तहां है। वहात हो लिए सिराश के का कारण जा मान हो हो हो तहां है। वहात हो जाता है। इस ताह हो का तहां है वहात है। वहात का निराश के का व्यक्ति हो वहात है। वहात हो लिए सिराश के का वारो मान हो हो हो तहां है। वहात हो का तहां है। वहात हो निराश हो वहात है। वहात हो निराश हो वहात है। वहात हो निराश हो वहात ह

फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

असंतोष, अवसाद और निराशा का हावी होना तय है। इसके विपरीत जितना हम परमार्थपरायण सोच रखते हैं. जनकल्याण का भाव रखते हैं. उतना ही जीवन आशा. उत्साह और प्रसन्नता से भरा होगा।

इस तरह स्वार्थ से परमार्थ की ओर जीवन का पलड़ा पलटते ही निराशा का अँधेरा छँटने लगता है और आशा का नवसंचार होता है। किसी बँधे-बँधाए ढर्रे पर चलते रहने से उपजी ऊब भी निराशा का कारण बनती है। इस अवस्था से उबरने के लिए जीवन में विविधता का होना महत्त्वपूर्ण हो जाता है। कला, संगीत, साहित्य, खेल, मनोरंजन, लोकसंपर्क, यात्रा, तीर्थाटन, धार्मिक कृत्य आदि जीवन के अनेक पहलुओं को अपनी रुचि के अनुरूप दैनिक जीवनक्रम में स्थान देने से उत्साह के कई आधार तैयार किए जा सकते हैं।

बहुत अधिक सोचते रहने से भी निराशा पनपती है। एक तो ऐसे में कोई ठोस व्यावहारिक कदम नहीं उठ पाता तथा जीवन विफलताओं से भरा रहता है और ऐसे में भुलवश कोई बुराई या गलत कर्म हो गया तो वह मामूली कुकर्म भी भारी अपराध जान पड़ता है। ऐसे में हीनता की भावना पैदा होती है, निराशा घर कर जाती है और मन अवसाद से ग्रसित

हो जाता है। इस तरह कुढन के समाधान के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि मन को लक्ष्य में व्यस्त रखें और बहुत अधिक सोच-विचार न करें। जीवन को एक खेल समझकर जिएँ, इस जीवनरूपी रंगमंच के नाटक में कुशल पात्र की भाँति अपनी भूमिका अदा करें। यदि राह में कोई गलती हो जाए तो उसे अधिक गंभीरता से न लें, बल्कि इनसे सीख लेकर आगे बढें।

फिर जीवन सबह और शाम, रात और दिन जैसे दोनों पक्षों के साथ मिलकर बनता है। इनके प्रति सम्यक दुष्टि हलके-फुलके जीवन का आधार बनती है। इसलिए केवल अँधेरे पर ही ध्यान केंद्रित न करें, सकारात्मक पक्ष पर भी विचार करें। जीवन के घनघोर अंधकार के बीच उज्ज्वल संभावनाओं के बीज अवश्य मिलेंगे। इनको अपने पुरुषार्थ एवं सतत प्रयास का खाद-पानी देते रहें। ये समय पर पृष्पित-पल्लिवत होकर अवश्य ही जीवन की बगिया को महकाएँगे। इस तरह ईश्वरीय विधान पर अटल आस्था के साथ अपनी संभावनाओं पर सतत कार्य किसी भी तरह की निराशा से उबरने का एक सनिश्चित राजमार्ग साबित होता है।

एक लड़का अपने घर जा रहा था। रास्ते में उसने देखा कि दो लड़के आपस में झगड़ रहे थे। उनमें से बलवान लड़का कमजोर लड़के को लकड़ी से पीट रहा था। रास्ते चलने वाले लड़के ने बलवान लड़के के पास जाकर पूछा—''क्यों भाई! तुम इसको कितने बेंत लगाना चाहते हो?'' किसी अपरिचित लडके को बीच में पडते देख बलवान लड़के का क्रोध और तेज हो गया। उसने कहा—''क्यों? तुम्हें क्या मतलब ? तुम क्या कर लोगे ?'' राह चलता लड़का बोला—''भाई! मैं तुमसे अधिक बलवान तो हूँ नहीं, जो इस कमजोर को बचाने के लिए लड़ सकूँ, लेकिन इतना चाहता हूँ कि तुम इस कमजोर लड़के के शरीर पर जितने भी बेंत मारना चाहते हो, उससे आधे मेरी पीठ पर लगा दो। इस तरह इसका आधा कष्ट मैं बाँट लूँगा।'' बलवान लड़का अपने हाथ की लकड़ी फेंककर चला गया। पिटने वाले लड़के की मुसीबत टल गई। वही राह चलता लड़का बड़ा होकर अँगरेजी का प्रसिद्ध कवि लार्ड बायरन के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

## अबके लिए बबुला है अबव का द्वार



बाल्यावस्था से ही भगवान महावीर में वैराग्य की भावना प्रबल होने लगी थी और उनका मन साधना में, तप में लीन होना चाहता था। इसलिए उनका अधिकांश समय चिंतन और मनन में ही व्यतीत होता था। कुमार अवस्था को पार कर युवावस्था में प्रवेश करने पर भी उनका मन सांसारिक सुखों की ओर आकृष्ट नहीं हुआ। संसार के प्राणियों को दु:खी देखकर उनका मन व्याकुल रहता था और वे संसार के दु:खों के कारण और उनको दूर करने के उपाय खोजने के प्रयत्नों में लगे रहते थे।

अंततः इसी उद्देश्य को लेकर उन्होंने गृह-त्यागकर साधु जीवन व्यतीत करने का निश्चय किया। राजसी सुख-वैभव, माँ की ममता और पिता का प्यार भी उनको अपने मार्ग से विचलित नहीं कर सके। तीस वर्ष की अवस्था में गृह-त्याग कर वे साधु जीवन व्यतीत करने लगे। उनका अधिकांश समय इसी बात के चिंतन में व्यतीत होता था कि संसार के दु:खों का कारण क्या है? लोग दु:खी क्यों हैं और इन दु:खों को दूर कर अनंत सुख, सच्चा सुख, शाश्वत सुख कैसे प्राप्त किया जा सकता है?

वे बारह वर्षों तक घोर तपस्या करते रहे। अंततः बयालीस वर्ष की अवस्था में उनको पूर्ण ज्ञान प्राप्त हुआ। उन्हें अतींद्रिय, आत्मिक व परम आनंद की अनुभूति हुई। तत्पश्चात वे तीस वर्षों तक भ्रमण करते हुए लोगों को दुःख के कारण व दुःख से मुक्ति के उपाय व शाश्वत सुख, अनंत सुख पाने का मार्ग बताते रहे। तब पूर्ण ज्ञान को उपलब्ध हुए भगवान महावीर ने कहा कि संसार के जीवों के दुःखों का मूल कारण अज्ञान ही है, अस्तु अज्ञान से मुक्त होने के लिए लोगों को पुरुषार्थ करना चाहिए।

पुरुषार्थ अर्थात चिंतन-मनन, तप-त्याग व ध्यान आदि का निरंतर अभ्यास करते रहने से ही जीव को पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है और पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति होते ही जीव को शाश्वत सुख की प्राप्ति होती है और जीव को सभी प्रकार के दु:खों से मुक्ति मिल जाती है। पूर्ण ज्ञान की अवस्था ही मुक्ति की अवस्था है। पूर्ण ज्ञान प्राप्त होते ही जीव को मोक्ष, मुक्ति, निर्वाण आदि की प्राप्ति होती है।

मुक्ति की अवस्था में ही आत्मा अनंत काल तक अतींद्रिय आनंद की अनुभूति करती रहती है। यह मुक्ति का द्वार प्रत्येक जीव के लिए समान रूप से खुला हुआ है। चिंतन-मनन, तप, ध्यान आदि के अभ्यास से कोई भी जीव इसे प्राप्त कर सकता है और सच्चे सुख की अनुभूति कर सकता है। जीव की आंतरिक पवित्रता, संयम, अहिंसा, तप आदि ही साधन हैं।

उनका यह स्पष्ट मत था कि मनुष्यों की उच्चता या निम्नता, उनके जन्म व वेश से नहीं, बल्कि उनके कर्मों से ही मानी जाती है। सिर मुँड्रा लेने से कोई श्रमण नहीं बन जाता,

## यज्ञः चेतनः जिगाति।

यज्ञ चेतना का जागरण करता है।

केवल, ओंकार का जप करने से कोई ब्राह्मण नहीं बन जाता, निर्जन वन में रहने मात्र से ही कोई मुनि नहीं बन जाता और केवल वल्कल वस्त्र पहनने से कोई तपस्वी नहीं हो जाता। इसके विपरीत समता पालने से श्रमण (संन्यासी), ब्रह्मचर्य का पालन करने से ब्राह्मण, चिंतन-मनन व ज्ञान से मुनि तथा तपस्या करने से तपस्वी होता है।

भगवान महावीर ने यहाँ तक कहा कि जो कुछ मैंने कहा है, उसको केवल इसिलए ही सत्य न समझो कि वह मैंने कहा है। यदि आप उसको अपने स्वयं के चिंतन-मनन व अनुभव के द्वारा सत्य पाओ, तभी सत्य समझो। अस्तु यदि हममें से कोई भी जिनमें पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने की सच्ची उत्कंठा है, दु:खों से मुक्ति पाने की सच्ची लगन है व अनंत सुख, शाश्वत सुख पाने की अभिलाषा है, वे महावीर के अनुसार स्वयं तपस्या में प्रवृत्त होकर ही इसे अनुभव कर सकते हैं। सबके लिए खुला है यह शाश्वत सुख का द्वार।



संयुक्त परिवार एक वृहद् परिवार है। इसमें कई है। संयुक्त परिवार में अपनेपन का महत्व भी बढ़ जाता है। सदस्य होते हैं यह दो या दो से अधिक प्राथमिक परिवारों व बढ़ों का प्यार छोटों से बना रहता है। श्रेक का यह वातावरण बात संग्रह है। परिवार के सदस्यों का अपना एक सामान्य वितास होता है। ये सभी धमं, कर्म, शासन प्रबंधन तथा भोजन आदि की दृष्टि से एकांकृत होते हैं। इस संदर्भ में इरावती कर्ते कहती हैं—एक संयुक्त परिवार ऐसे व्यक्तियों का समृह है, जो सामान्यतः एक ही घम में रहते हैं ये एक ही सामें होते हैं। यह तो पान प्रकृति में हिते हैं ये एक वितास को उदासीनता एक सुखद संयुक्त परिवार को सामान्य होता है। एक तुमान मुनी, लाला-लल्ली घभी एकह्सर से सामान्य को उदासीनता एक सुखद संयुक्त परिवार को चाह की ओर अग्रस्य है। अब संयुक्त परिवार को आवश्यकता अनुभव को जा रही हैं। महान्यारों में लोगा अब परिवार को विशेषता है—संयुक्त परिवार है। अपनी सामाजिक व्यवस्था को सामान्या है—संयुक्त परिवार है। अपनी सामाजिक व्यवस्था को सामान्या देश संयुक्त परिवार है। अपनी सामाजिक व्यवस्था को सामान्या (उभरकर सामाने) आई हैं, परंतु अब हम संयुक्त परिवार को प्रसाद के अपराय हो को परंतु हैं। सहान्य हैं। सहान्य हैं। सामान्य परंतु हैं। सहान्य हैं। अपनी सामाजिक व्यवस्था को परिवार को धारणा को कमजोर करने के दुष्परिणाम से भी-संवार को अवश्व होने लो हैं। परंतु हैं। संयुक्त परिवार को सहस्य संय परिवार को हैं। सहना हैं। उस परिवार को सामस्य हैं। सामान्य परंतु हैं। सहन परिवार के परंतु हैं। सहन परिवार को सामस्य हैं। सामान्य हैं। सामान्य

उनके बच्चों के साथ बड़ी माँ की तरह, उसका मुंबई में इलाज करवाती रहीं। माँ ग्वालियर में रहीं और ताई जी मुंबई में। घर के संयुक्त परिवार का यह विश्वास और अपनापन अनूठा था। ऐसे स्नेह के वातावरण में असंभव भी संभव होता है। बच्चा ब्लड कैंसर से पीड़ित था। वह पूरी तरह ठीक हो गया।

संयुक्त परिवार की एकता-प्रतिबद्धता के आगे सभी को नतमस्तक होना पड़ता है। तीनों भाई दुकान बंद करके आते हैं और वे एक-एक दिशा में स्थित भगवान के दर्शन कर घर लौटते हैं। घर पहुँचकर बड़े भाई को नगद (कैश) दे देते हैं। उसके बाद माँ को पूरी जानकारी देते हैं। फिर तीनों भाई एक साथ भोजन करते हैं। इस तरह का यह अनुठा संयुक्त प्रेम देखते ही बनता है।

इसी तरह इंदौर का एक परिवार है, जो सात भाई हैं। सातों ने एक शृंखला में मकान बनवाया है। सभी एक साथ रहते हैं। अलग-अलग मकान होने के बाद भी पूरा घर एकदूसरे से जुड़ा हुआ है। एक संयुक्त हॉल है, उसी में एक बड़ा-सा टीवी लगा हुआ है, सभी भाई, सभी बच्चे उसी हॉल में रहते हैं। साथ-साथ बैठते-उठते हैं। सभी का चौका एकदूसरे के जाने लायक बना हुआ है, सभी आते-जाते हैं। एक, दो भाई यदि प्रवास पर (बिजनेस दौरे पर) रहते हैं, इसके बावजूद भी घर पर चार-पाँच भाई बने रहते हैं। अपनापन एवं प्यार की ऐसी मिसाल बहुत कम जगह देखने को मिलती है।

संयुक्त परिवार संवेदनशीलता का अटूट बंधन है। एकाकीपन या अकेले रहना मनोरोग को जन्म देता है। यह परिजनों से दूर रहने जैसा अभिशाप जैसा ही हो जाता है। संयुक्त परिवार आज के भौतिकतावादी युग में परम आवश्यक है। संयुक्त परिवार में देश बसता है, हमारी संस्कृति, परंपराएँ और मर्यादाएँ बसती हैं। एकता के सूत्र में बँधे रहने वाले संयुक्त परिवार में सारा संसार रमता है। भारतीय जीवनशैली का नाम ही है—संयुक्त परिवार।

परिवार का आधार संवेदना है। संवेदनशील भावनाओं की डोर से रिश्तों की मिठास एवं मधुरता बनी-बुनी रहती है। संयुक्त परिवार में रिश्तों की यह मधुरता अधिक व्यापक होती है। इससे परिवार के सदस्यों का श्रेष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण एवं विकास होता है। व्यक्तित्व के गुण नैसर्गिक रूप से विकसित होते हैं। संयुक्त परिवार श्रेष्ठ व्यक्तित्व के निर्माण का आधार है। यहीं पर सुख-शांति एवं समृद्धि रहती है। इसी को स्वर्गीय दिव्यता कहते हैं। अत: हमें संयुक्त परिवार में रहना चाहिए।

\*

स्वामी जी ने कुद्ध साधुओं से कहा—''आप लोग उपवास का सच्चा अर्थ ही नहीं समझ पाए हैं। उपवास का अर्थ है—'प्रभु के समीप वास करने की साधना करना।' उपवास के नाम पर स्वादिष्ट भोजन करना, प्रभु की समीपता से दूर ले जाने वाला कार्य है। आप लोग साधु होकर झगड़ा कर रहे हैं। यह शोभनीय नहीं है।'' यह सुनकर सभी साधुओं को अपनी गलती पर पश्चात्ताप हुआ। उन्होंने इसके लिए स्वामी जी से क्षमा माँगी। उन्हें उपवास का सच्चा अर्थ समझ में आ गया था।

आध्यात्मिक जीवन के व्यावहारिक सोपान कुछ इस तरह से हैं, जिसके आधार पर साधना-पथ की प्रगति को आँका जा सकता है, साधक जीवन को कसा जा सकता है। श्रद्धा पहला तत्त्व है। हमारी अपने आध्यात्मिक आदर्श, इष्ट या गुरु में कितनी आस्था व श्रद्धा है और यह तय होता है हमारी आध्यात्मिक चाह की तीव्रता के अनुरूप।

यदि आध्यात्मिक अभीप्सा नहीं है तो साधक गुरु को एक व्यक्ति मानने की भूल कर बैठता है और अपने स्वार्थ की पूर्ति एवं अहंकार की तुष्टि का माध्यम मानकर चलता है, जिसका परिणाम अंतत: निराशा के रूप में ही हाथ लगता है। स्मरण रहे-गुरु एक व्यक्ति दिख सकता है, लेकिन वह ईश्वरीय चेतना का संवाहक जीवंत विग्रह होता है, स्वयं ईश्वरमय होता है। उससे सांसारिक संबंध जोड़ना आध्यात्मिक रूप में साधक को अधिक दूर तक नहीं ले जा सकता।

हम आध्यात्मिक पथ पर कितना बढ रहे हैं, इसका परीक्षण हमारी भावदृष्टि है कि हम कितना सर्वत्र ईश्वरीय चेतना की उपस्थिति अनुभव कर पा रहे हैं, कितना हम इस जग को सीता-राममय देख पा रहे हैं, कितना हमें इसमें शिव-शक्ति का चैतन्य स्वरूप आभासित हो रहा है। इसकी व्यावहारिक कसौटी है कि हमारी भावदुष्टि में कितनी पवित्रता आ रही है तथा इसमें दूसरों के प्रति कितने शुभ भाव विकसित हो रहे हैं, जो हमारी वाणी-व्यवहार के माध्यम से व्यक्त होते हैं।

साधक का जीवन कर्तव्यों के प्रति कठोर होता है और अथक श्रम से युक्त होता है, लेकिन यह निरुद्देश्य नहीं होता। अपने स्वधर्म के अनुकूल यह एक स्पष्ट दिशा लिए होता है तथा इसके आधार पर उसकी प्राथमिकताएँ स्पष्ट होती हैं, जिसे सांसारिक प्रलोभन, दबाव या अंधड विचलित नहीं कर सकते। इस तरह एक आध्यात्मिक साधक का जीवन अनुशासित होता है, सुव्यवस्थित होता है और वह आलस्य-प्रमाद को प्रश्रय नहीं देता तथा सतत परम लक्ष्य की ओर गतिशील रहता है।

आध्यात्मक जीवन—'सादा जीवन-उच्च विचार' का मुर्तरूप होता है। जीवन के उच्च मुल्यों से प्रेरित होता है, जिसका लोभ-मोह से अधिक लेना-देना नहीं रहता। जितना जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक है, इतना अर्जन करता है, लेकिन अनावश्यक संग्रह से बचता है। वह आत्मावलंबी जीवन जीता है। इसे अपना कर्त्तव्य मानते हुए परिश्रम करता है तथा आवश्यक संचय करता है, लेकिन इसके प्रति मोह नहीं रखता।

आध्यात्मिक जीवन अपार धैर्य एवं तप का प्रतीक होता है, जिसमें उदारता एवं सिहष्णुता का अभ्यास किया जाता है। इसकी पहली प्रयोगशाला अपना परिवार या कुटुंब होता है। वह गृहस्थ में एक तपस्वी की भौति जीता है व तपोवन के रूप में संयम, सेवा और सिहष्णुता जैसे सद्गुणों का अभ्यास करता है और इसी का अभ्यास फिर समाज-संसार के व्यापक फलक पर सेवा-साधना के रूप में करता है। साथ ही वह दसरों की उन्नति में प्रसन्नता का भाव रखता है और जरूरतमंदों की सहायता करता है।

स्वाध्याय-सत्संग आध्यात्मिक अभीप्सु के जीवन का अभिन्न अंग होते हैं और इनके प्रकाश में वह नित्य स्व-मुल्यांकन करता है। वह अपनी त्रुटियों एवं किमयों पर नित्य कार्य करता है। सबके प्रति कृतज्ञता के भाव से भरा वह 'शब्द ब्रह्म' का साधक होता है, अपने शब्द एवं वाणी का संयमित उपयोग करता है। प्रपंच से सर्वथा दूर रहता है और परनिंदा में विश्वास नहीं करता। वाणी की इस साधना के साथ वह अपनी वाकुशक्ति को परिष्कृत करता है और सबके साथ सामंजस्यपूर्ण व्यवहार रखता है, लेकिन दुष्टता एवं धूर्तता का अपने शिवसंकल्प के साथ प्रतिकार करता है।

आध्यात्मिक पथिक नित्य ध्यान के लिए कुछ समय अवश्य निकालता है, जो स्थूल कर्मकांड से अधिक सूक्ष्मस्तर पर सक्रिय होता है। मन के आसन में स्थिर होकर जीवन की गहराई में उतरता है तथा अपने जीवन के परम सत्य की ओर उन्मुख रहता है और इसके साथ साक्षीभाव से जीवन के खेल व प्रभु की लीला को देखता है और विश्वरूपी रंगमंच

\*\*\*\*\*

<u></u>

वह नहीं चुकता। सत्य एवं धर्ममार्ग पर चल रहे आध्यात्मिक साधक के लिए उसका धर्मनिष्ठ जीवन दैवी सुरक्षा कवच का कार्य करता है, जिसका वह किसी भी कीमत पर परित्याग नहीं करता और संयोगवश यदि कुछ गलती हो जाए तो उसका परिष्कार-परिमार्जन करता है तथा सतत अपनी चेतना को परिष्कृत करता रहता है। तप और योग का अवलंबन लेते हुए आध्यात्मिक साधक अपने गुरु के बताए मार्ग पर आगे बढता है और जीवन के परम लक्ष्य की ओर अग्रसर

राजहंस प्रतिवर्ष सुदूर देशों का प्रवास किया करते और कठोर शीत के चतुर्मास समाप्त होते ही मानसरोवर वापस आ जाते थे। ऐसे ही प्रवास के दौरान राजहंसों की टोली समुद्रतट पर कोणार्क राजवंश के उद्यान पर उतरी। वहाँ का माली इन राजहंसों का प्रतिवर्ष आतिथ्य करता था। इस बार जब राजहंस लौटने लगे तो माली रास्ते के लिए भी कुछ देने लगा तो राजहंसों ने मना करते हुए कहा—''तात! संचय पाप है। यह खाद्य अभावग्रस्तों को दे देना। कुछ भी मिले, कहीं से भी मिले को उदरस्थ कर लेना काकवृत्ति वाले घटिया लोगों का

राजहंस के ये वचन वहीं पास के वृक्ष पर बैठे कौवे ने सुन लिए। वह पंख फुलाता हुआ राजहंसों के पास आकर उन्हें भला-बुरा कहने लगा और बोला— ''राजहंसो! तुम्हें अपनी श्रेष्ठता का अभिमान है। मुझसे प्रतियोगिता करो। इस विशाल समुद्र को पार करने की जिसमें शक्ति होगी, वही श्रेष्ठ माना जाएगा।" राजहंसों ने उसे बहुत समझाया, पर वह नहीं माना और हंसों के साथ उड़ने लगा। आगे-आगे कौवा और पीछे राजहंसों की टोली, कौवा जल्दी ही थक गया। वह गिरकर समुद्र में डूबने वाला ही था कि राजहंसों को दया आ गई और उन्होंने उसे अपनी पीठ पर बैठाकर पीछे लौटकर उसके स्थान तक पहुँचा दिया। राजहंस बोले—''तात्! अपनी शक्ति से बढ़कर प्रदर्शन उचित नहीं होता, इससे अनर्थ हो सकता है। मिथ्या अभिमान नहीं करना चाहिए।'' इतना कहकर राजहंसों की



स्तर पर शारीरिक साधना करते हुए शरीर को स्वच्छ एवं पवित्र बनाकर इसे आत्मरूप भगवान का मंदिर बनाना ही होगा। हमें शरीर के कोने-कोने को पवित्र बनाना ही होगा। हमें हमारे खान-पान में सात्त्विकता व पवित्रता का ध्यान रखना होगा। भगवान के मंदिर रूप देहरूपी देवालय को नशा, मांसाहार, अनीति से प्राप्त अन्न एवं दुराचार, व्यभिचार

सखना होगा। भगवान के मंदिर रूप देहरूपी देवालय को नशा, मांसाहार, अनीति से प्राप्त अन्य एवं दुगचार, व्यिभवार में सूर (खना होगा। हमें इंद्रियसंयम का यथोचित पालन कराना होगा। हमें इंद्रियसंयम कराना होगा। हमें इंद्र्ययसंयम कराना होगा। हमें इंद्र्ययसंयम कराना होगा। हमें इंद्र्ययसंयम कराना होगा। हमें इंद्र्ययसंयम कराना हमें इंद्र्ययसंव्रयसंयम कराना हमें इंद्र्ययसंयम कराना हमें इंद्र्ययसंवरम कराने हमें इंद्र्ययसंवरम कराने कराने हमें इंद्र्ययसंवरम हमें कराने कराने हमें इंद्र्ययम हमें इंद्र्ययम हमे इंद्र्ययम हमें इंद्र्ययम हम

इस तरह सौंप देना होगा, जैसे कि इंजन डाइवर के हाथों में स्वयं निष्क्रिय रहता है, फिर डाइवर की इच्छा से ही इंजन कार्य करता है।

\*

उपासना में, ध्यान में, भक्ति में, प्रेम में हम जब स्वयं को भगवान के हाथों इस प्रकार सौंप देते हैं तभी भागवत प्रेम, सामर्थ्य और निर्विकार बुद्धि अपना कार्य करते हैं और

और योग की सिद्धि भी न माँगे, सिवाय इसके कि आपमें और आपके द्वारा भगवान के संकल्प की ही प्रत्यक्ष पूर्ति होती रहे।

\*\*\*

जो भक्त, जो साधक भगवान से कुछ माँगते हैं, उनको वे उस वस्तु को ही देते हैं, जिसे वे माँगते हैं, किंतु जो लोग अपने आप को ही भगवान को दे देते हैं अर्थात स्वयं को भगवान के हाथों सौंप देते हैं और कुछ नहीं माँगते, उनको वे उन सभी चीजों को तो देते ही हैं, जिनको वे माँगते हैं या जिनकी उन्हें आवश्यकता हुई होती है, बल्कि इनके अतिरिक्त वे स्वयं अपने आप को और अपने प्रेम को भी उन्हें प्रदान करते हैं।

साथ ही यह भी महत्त्वपूर्ण है कि हमारी साधना, हमारी प्रार्थना, हमारी उपासना कुछ देर बैठकर, खड़े होकर, देवालयों में जाकर पूजन-अर्चन करने मात्र तक सीमित नहीं रहनी चाहिए, बल्कि पूजा, उपासना, प्रार्थना, ध्यान की निश्चित विधि पूरी कर लेने के बाद भी हमारी पूजा, उपासना, ध्यान, जप, प्रार्थना आदि हमारे कर्म से, व्यवहार से सदैव प्रकट होते रहने चाहिए। हम व्यापारी, उधोगपित, किसान, चिकित्सक, अध्यात्म आदि जो भी हों हमारे लिए हमारा कर्तव्य कर्म भी भगवद्उपासना ही होना चाहिए। इस हेतु हमें हमारा कर्तव्य कर्म पूरी ईमानदारी, जिम्मेदारी, बहादुरी, समझदारी व सच्चाई के साथ ही करना चाहिए;

क्योंकि सर्वज्ञ, सर्वव्यापी ईश्वर हमारे हर कर्म का साक्षी है। अत: उससे हमारा कोई भी कर्म छिपा हुआ नहीं रह सकता।

इसलिए युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव के शब्दों में कहें तो ईश्वर को सर्वव्यापी, न्यायकारी मानकर हमें ईश्वर के अनुशासन को अपने जीवन में उतार लेना चाहिए और अपना कर्त्तव्य कर्म करते रहना चाहिए। हमें अनीति से प्राप्त सफलता के बजाय नीति पर चलते हुए असफलता को शिरोधार्य करना चाहिए।

जीवन में हमें दूसरों के साथ वह व्यवहार नहीं करना चाहिए, जिसे हम स्वयं के लिए पसंद नहीं करते या नहीं चाहते। कर्म करते हुए हमें ईश्वरीय कर्मफल विधान का स्मरण रहना चाहिए। कर्तव्य कर्म करते हुए हमें कर्तापन की भावना से विलग होकर हमारे अंदर भागवत शक्ति की जो क्रिया हो रही है, प्रभु हमें कैसे यंत्रवत् चला रहे हैं, इसे हमें साक्षीभाव से देखते रहना चाहिए।

इस प्रकार से की गई साधना, उपासना ही साधक के जीवन में चमत्कारिक परिवर्तन, रूपांतरण ला पाने में समर्थ सिद्ध होती है और साधक को अपने अभीष्ट लक्ष्य, परम लक्ष्य, परम प्रभु के परम स्पर्श की, परम प्रेम की प्राप्ति भी होकर रहती है। इसमें कोई संशय नहीं, कोई संदेह नहीं। अस्तु हम भी क्यों न याचना नहीं, बल्कि उपासना करें।

नवयुग की चेतना घर-घर पहुँचाने और जन-जन को जाग्रति का संदेश सुनाने का ठीक यही समय है। इन दिनों हमारी भूमिका युगदूतों जैसी होनी चाहिए। इन दिनों हमारे प्रयास समुद्र पर सेतु बाँधने वाले नल-नील जैसे होने चाहिए। खाई कूदने वाले अंगद की तरह, पर्वत उठाने वाले हनुमान की तरह यदि पुरुषार्थ न जगे तो भी गिद्ध-गिलहरी की तरह अपने तुच्छ को महान के सम्मुख समर्पित करना तो संभव हो ही सकता है। गोवर्धन उठाते समय यदि हमारी लाठी भी सहयोग के लिए न उठी तो भी स्त्रष्टा का प्रयोजन पूर्णता तक रुकेगा नहीं। पश्चात्ताप का घाटा हमें ही सहना पड़ेगा। साहसिक शूरवीरों की तरह अब नवयुग के अवतरण में अपनी भागीरथी भूमिका आवश्यक हो गई है। इसके बिना तपती भूमि और जलती आत्माओं को तृप्ति देने वाली गंगा को स्वर्ग से धरती पर उतरने के लिए सहमत न किया जा सकेगा।

\*

—परमपूज्य गुरुदेव

\*\*\*



विगत अंक में आपने पढ़ा कि वसंत पंचमी के पावन अवसर पर पूज्य गुरुदेव ने स्वर्ण जयंती वर्ष की विशेष साधना में सहभागिता से वंचित रह गए सुपात्र साधकों के मन की उलझनों का समुचित समाधान करते हुए उन्हें आश्वस्त किया कि कुछ ही समय पश्चात नए साधकों को प्रवेश मिल सकने की संभावना बनेगी, अतः परिजन स्थानीय स्तर पर अपनी अलग-अलग भूमिकाओं को कुशलतापूर्ण ढंग से निबाहने की तैयारी में संलग्न हों। उन्हीं दिनों धर्मसंघ के प्रमुख व विभूतिवान संत करपात्री जी द्वारा पूज्यवर निर्दिष्ट स्वर्ण जयंती साधना के स्वरूप को शास्त्र की दृष्टि से अमर्यादित ठहराया गया, किंतु समय बीतने के साथ ही स्वयं उन्हें इसमें ईश्वरीय योजना की झलक दिखी और उन्होंने पूज्य गुरुदेव को पत्र के माध्यम से शुभकामनाएँ प्रेषित कीं। आइए पढ़ते हैं, इससे आगे का विवरण ...

इस संबंध में 1956 की एक घटना प्रसिद्ध है, जिसमें विनोबा भावे की प्रेरणा से काशी विश्वनाथ मंदिर में हरिजनों ने प्रवेश किया और करपात्री जी ने इसकी आलोचना की। उन्होंने शास्त्रीय और आध्यात्मिक आधार पर इसे वर्जित करार दिया। यही नहीं, भविष्य में कभी उस काशी विश्वनाथ मंदिर में प्रवेश नहीं करने का संकल्प भी ले लिया। काशी विश्वनाथ की आराधना के लिए उन्होंने धर्मसंघ परिसर में एक नया मंदिर बनवाया और उसे विश्वनाथ मंदिर का नाम दिया। समाज सुधार और मंदिरों में सभी के प्रवेश को सही उहराने की दृष्टि से करपात्री जी की यह पहल सही नहीं थी।

\*\*\*\*\*

जे0 कृष्णमूर्ति ने 'दि इलेस्ट्रेटेड वीकली' को दिए साक्षात्कार में उन्हें अपने समय का विशिष्ट धर्माधिकारी बताया था। उन्होंने मंदिर बनाने की आवश्यकता से इनकार किया था, लेकिन जबरदस्ती मंदिर प्रवेश को व्यर्थ बताते हुए करपात्री जी के दृष्टिकोण का पक्ष लिया। जे0 कृष्णमूर्ति की शैली में वर्षों बाद ओशो ने भी मंदिर विज्ञान पर चर्चा करते हुए एक प्रवचन में करपात्री जी के पक्ष को अध्यात्म विज्ञान की दृष्टि से सही माना था।

इन तथ्यों का उल्लेख धर्म परंपरा में करपात्री जी की आधिकारिक मान्यता के संदर्भ में किया जा रहा है। गुरुदेव ने उनके पत्र का उल्लेख वर्षों बाद किया। इस बारे में उन्होंने माताजी से सिर्फ इतना ही कहा कि करपात्री जी का समाधान हो गया है। वे साकार उपासना, पूजा और प्रार्थना समन्वित गायत्री-उपासना या ब्रह्मसंध्या अथवा गायत्री योग के अभिनव विधान को शास्त्रसम्मत मानने लगे हैं। बिना किसी चर्चा, विमर्श और तर्क-वितर्क के उन्होंने गायत्री योग को कैसे मान्यता दे दी? जिन संत ने समाज सुधार की भावना से चलाए गए मंदिर प्रवेश अभियान को शास्त्र विरुद्ध बताया था, उन्होंने पाँच-सात मिनट में ही संपन्न हो जाने वाली ब्रह्मसंध्या को ज्यों-का-त्यों कैसे स्वीकार कर लिया? इस विषय में न गुरुदेव ने कुछ कहा और न ही किसी ने पूछने की जरूरत समझी।

#### शास्त्रसम्मत गायत्री योग

करपात्री जी द्वारा गायत्री योग को शास्त्रसम्मत मान लेने का रहस्य भागवत के प्रसिद्ध विद्वान कथावाचक डोंगरे जी महाराज ने किया था। किसी प्रसंग में चर्चा चलने पर उन्हें स्वयं करपात्री जी ने बताया था। डोंगरे जी ने कहा कि करपात्री जी से गायत्री योग के संबंध में पूछा तो उन्होंने गोस्वामी तुलसीदास का प्रसंग सुनाया। कहा कि गोस्वामी जी की रची रामायण रामचरितमानस को उस समय के पंडितों. विद्वानों ने और धर्माचार्यों ने अमान्य कर दिया था।

विद्वानों ने मानस की परीक्षा का एक उपाय निकाला। उस उपाय में मानस की हस्तलिखित प्रतिलिपि काशी विश्वनाथ मंदिर में रख दी गई। उस प्रति पर अन्यान्य धर्मग्रंथ रख दिए

०००,०००००००,०००००० ▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **∢००००००००००००००** 

\*\*\*\*

गए और मंदिर के द्वार रात्रि में यथासमय बंद कर दिए गए। तय किया कि सुबह मानस की स्थिति और स्वरूप को भगवान विश्वनाथ प्रमाणित करेंगे। भाव यह था कि ग्रंथ से काशी विश्वनाथ का विग्रह क्या व्यवहार करता है ?

विशेषताएँ स्वयमेव निहित हैं। इसलिए उसके साथ कल्याण और सुंदरतावाची शब्द लगाना आवश्यक नहीं हैं।''करपात्री जी के इस सूक्ष्म विवेचन से सहमत हुआ जाए या नहीं, यह अलग बात है, लेकिन उन्होंने अपने प्रयोग में प्रयोज्य विधेय

बिश्वनाथ प्रमाणित करेंगे। भाव यह था कि ग्रंथ से काशी विश्वनाथ का विग्रह क्या व्यवहार करता है?

सुबह हुई।उन सभी विद्वानों की उपस्थिति में मंदिर के पट खोले गए। सबने देखा रामचितमानस की प्रति सब ग्रंथ से कउपर रखी है। उस पर भगवान शंकर की मुद्रा अंकित है और लिखा है—सस्यं, ज्ञानं, अनन्तं। उपनिषद के इस वाक्य के आगे 'ब्रह्य' शब्द नहीं लिखा था। उपनिषद के इस वाक्य के आगे 'ब्रह्य' शब्द नहीं लिखा था। उपनिषद के इस वाक्य के आगे 'ब्रह्य' शब्द नहीं लिखा था। उपनिषद के इस वाक्य के आगे 'ब्रह्य' शब्द नहीं लिखा था। करपात्री जी ने डोंगर महाराज से कहा कि गायत्री योग के संबंध में भी उन्होंने इसी तरह का प्रयोग किया था।

आचार्य जी (गुरुदेव) ने स्वर्ण जयंती साधना या गायत्री योग का जो विधान भेजा था, उसे भूतभावन भगावान काशी विश्वनाथ के सामने रख दिया गया। यह शिवरात्रि के वाला दिन था। उस प्रति के साथ अन्य संख्या विश्वनाथ की मानन के उसे एं उसे हिए साथ निश्वनाथ की मानन के उसे एं उसे हिए साथ किया था।

अत्रत्त व्रह्म 'का पूरे व विश्वनाथ को सामन स्वर्ण तथा विश्वनाथ की प्रवित्त का पूरा वाक्य लिखा था और नीचे काशी विश्वनाथ की मुहर थी।

सन् 1974 के कुंभ पर्य में मार्च-अप्रैल के महीनों में करपात्री जी के हिंदा का पूरा वाक्य लिखा था और नीचे काशी विश्वनाथ की मुहर थी।

सन् 1974 के कुंभ पर्य में मार्च-अप्रैल के महीनों में करपात्री जी हिंदा का पूरा विश्वनाथ के समान स्वर्ण जयंती वर्च मंगायत्री परिवार की महिंदा के पर खोलों के स्वर्ण पर लिखा होने की बात कहते हैं।'' करपात्री जी हिंदा लाए थे। डोंगरे महाराज के सुनाए प्रमा का जिक्र करते हुए एक राष्ट्रीय दैनिक के संवाददाता ने उनने मुख्य—''भुटले किया के स्वर्ण मंगायत्री परिवार के मंगायत्री परिवार को मंगीयत्री पर त्र लिखा गया मानते हैं। सही का के कश्वचंद से हुरा स्वर्वाण ने कहा कि सभी विधियों एक होगा हो हो सुन सम्य स्वर्वाण के क्या मंगायत्री परिवार के मंगायत्री परिवार के मायत्री विधियों पर हो मार्य के विध्व मंगायत्री पर लिखा हो हो सुन सम्य स्वर्य मंगायत्र स्वर्य स्वर्य माप्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य सम्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य सम्य स्वर्य स्वर्य सम्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य सम्य स्वर्य स्वर्य सम्य सम्य स्वर्य सम्य सम्य स्वर्य सम्य सम्य स्वर्य सम्य सम्य

गीता जयंती पर ही 'ब्रह्मसंध्या' के पक्ष में अपनी सम्मति व्यक्त कर दी थी।

हमारे गुरु तपोवन महाराज की अनुमित से अपने सनातनधर्मियों से अनुरोध किया था कि जो लोग पारंपरिक विधान अपनाने में किठनाई अनुभव कर रहे हैं, वे इस ब्रह्मसंध्या को अपनाएँ। मध्यकाल में स्वामी रामानुजाचार्य ने जिस तरह अत्यंत गोपनीय बताए जा रहे तारक मंत्र को सबके लिए उद्घाटित कर दिया था। उन्हीं रामानुज ने इस युग में जैसे श्रीराम बनकर गायत्री मंत्र का उत्कीलन कर दिया है। शास्त्रीय भाषा में उस पर लगे प्रतिबंध और उत्कीलन हटा दिए हैं।

स्वामी विद्यानंद ने इस घटना का उल्लेख बाद में साधु-संतों का उपहास करने के लिए किया था, लेकिन गुरुदेव के प्रति इस प्रयोग के लिए आभार ही जताया था। कहा था कि सनातन धर्म का स्वरूप मृतप्राय हो गया है और आर्यसमाज अपनी प्रासंगिकता खोता जा रहा है। इस संक्रमणकाल में गुरुदेव ने 'ब्रह्मसंध्या' अथवा 'गायत्री योग' के माध्यम से सर्वजनीन भारतीय उपासना-विधि का नया उन्मेष किया है।

1976-77 में छपे समाचारों और आलेखों में ब्रह्मसंध्या, गायत्री योग या साधना स्वर्ण जयंती को वर्ष की महत्त्वपूर्ण घटना बताया गया। इस विधान का विरोध करते हुए लोग भी सामने आए थे तो दबे और मुखर स्वरों में आलोचना करने वालों की संख्या भी कम नहीं थी। साल भर बीतते न बीतते विरोध शांत हो गया। साधना स्वर्ण जयंती का समापन होने पर विश्व अध्यात्म परिषद् नामक मंच ने भारत के दस महानगरों, अट्ठाईस नगरों तथा करीब डेढ़ हजार कसबों का सर्वे किया।

सर्वे का उद्देश्य यह जानना था कि सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रों में चल रहे आध्यात्मिक प्रयोगों में किसकी क्या स्थिति थी। ऐसे प्रयोगों की संख्या उन्नीस थी। प्रजापित ब्रह्माकुमारी, हरे कृष्ण आंदोलन, स्वाध्याय आंदोलन, संकीर्तन, गीता प्रचार, भावातीत ध्यान और जीवन क्रांति ध्यान आंदोलन जैसे प्रयास भी इस सूची में थे। परिषद् ने जनवरी, 1977 में अपने परिणाम घोषित किए और बताया कि साधना स्वर्ण जयंती अनुष्ठान लोकप्रियता और मान्यता की दृष्टि से सबसे आगे था। साधना स्वर्ण जयंती के सूत्रसंचालक गुरुदेव के जल उपवास ने आंदोलन में प्रखरता भर दी थी। उस बारे में आगे के पन्नों पर चर्चा करेंगे।

(क्रमशः)

भगवान बुद्ध सरस्वती नदी में विहार कर रहे थे। पास की केवट बस्ती के कुछ मल्लाहों ने स्वर्ण-वर्ण की एक अद्भुत मछली पकड़ी। मल्लाहों ने ऐसी मछली पहले नहीं देखी थी। वे मछली को लेकर राजा के पास गए। राजा को भी कुछ समझ नहीं आया तो वे उसे भगवान बुद्ध के पास ले गए। राजा ने पूछा—''भंते! इस मछली का वर्ण स्वर्ण का कैसे है? और इसके मुख से इतनी दुर्गंध क्यों आ रही है?'' बुद्ध ध्यानपूर्वक मछली को देखकर बोले—''यह साधारण मछली नहीं है। यह कश्यप बुद्ध के शासनकाल में कपिल नामक महापंडित भिक्षु था। इसने अपने गुरु को धोखा दिया, उसी पाप के परिणामस्वरूप ऐसा हुआ है।'' बुद्ध ने कहा—''अपने विगत जन्म का पाप याद करो।'' मछली बोली—''हाँ! मैं ही कपिल हूँ।'' उसकी आँखों में पश्चात्ताप के आँसू भर गए। आगे कोई शब्द नहीं निकला। वह उस क्षण में खो गई, जब उसने गुरु को धोखा दिया था। तभी उसके प्राण निकल गए। पर अब उसमें से दुर्गंध के स्थान पर सुगंध निकल रही थी। पाप का फल इनसान को कभी-न-कभी भुगतना ही पड़ता है।

०००००००<u>०</u>००००० ▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **∢००००००००**०

\*





त्याग अर्थात छोड़ देना। वह जो अपने पास निरर्थक है—उसे हटा, मिटा देना। जब हम अपने पास से निरर्थकता को हटा देते हैं, तभी नयेपन की संभावना की राह खुलती है। इसलिए त्याग को प्रगति का नवचरण कहा गया है। त्याग जीवन की विकासयात्रा का एक अनिवार्य अंग है। यह आत्मशोधन का राजमार्ग है। यह अशुभ के स्थान पर शुभ की प्रतिष्ठा का नियम है। एक को छोड़ने पर ही दूसरे की प्राप्ति संभव होती है। रखा हुआ कदम उठाकर ही पथ पर आगे नवचरण धरा जा सकता है।

पेट में अवशेष तत्त्व का (मल का) त्याग करने पर ही भोजन की इच्छा होती है। शुद्ध वायु को ग्रहण करने के लिए फेफड़ों में स्थित अशुद्ध वायु को छोड़ना पड़ता है। संग्रह करने से, पदार्थों को चिपकाए रहने से तो जीवन गति में विसंगति व विषमता पैदा हो जाती है। जैसे रुकने पर पानी सड़ने लगता है, वैसे ही पेट यदि खाए हुए पदार्थों को अपने अंदर ही संग्रह करता रहे तो अनेकों बीमारियाँ पैदा होकर शरीर में अनेकों विकृतियाँ एवं उपद्रव पैदा होंगे। हृदय रक्त की वितरण-व्यवस्था में संग्रह बुद्धि से काम ले तो शरीर की चेतनता ही नष्ट हो जाएगी।

त्याग बिना विकास, प्रगित, सिक्रयता एवं उन्नित का पथ प्रशस्त नहीं होता। जब तक हम किन्हीं पदार्थों, पिरिस्थितियों, यहाँ तक कि विचारों, भावनाओं में बँधे पड़े रहते हैं, तब तक अन्य विषयों की ओर ध्यान नहीं जाता। इसिलए किसी वस्तु या विषय विशेष से बँधना, उसमें लिप्त रहना सर्वथा त्याज्य है। जो कुछ हमारे पास है, हम जो कुछ भी जानते हैं, उसे हम अपनी उन्नित का आधार बना सकते हैं। जिस सीढ़ी पर हम खड़े हैं, उसका सहारा लेकर ऊपर उठ सकते हैं, लेकिन अंततः सीढ़ी हमें छोड़नी ही पड़ेगी। यह असंभव है कि हम उस पर खड़े भी रहें और ऊपर भी पहुँच जाएँ।

जीवन का आयाम व्यापक है। जीवन की पगडंडी बड़ी लंबी है। संसार का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। आगे बढ़ने के लिए, प्राप्त करने के लिए हमें नित्य त्याग करना पड़ेगा ही। यहाँ कोई भी तो ऐसा धाम नहीं है, जहाँ पहुँचकर यह कहा जा सके कि बस, हमारी यात्रा पूरी हो गई, अब यहाँ से हटना नहीं पड़ेगा। जब तक जीवन है, संसार है, तब तक हमें छोड़ना पड़ेगा, त्याग करते रहना होगा। परिवर्तन ही संसार का नियम है।

इसलिए त्याग कीजिए 'मैं' और 'मेरेपन' का, ताकि हम 'परमसत्ता' की अनुभूति कर सकें। जब तक 'मैं' है, तब तक हम परमात्मा की विराट सत्ता की अनुभूति प्राप्त नहीं कर सकेंगे।'मेरेपन' के कारण वस्तुओं, पदार्थों, विषयों की सीमा से बाहर नहीं निकल सकेंगे। ऐसी स्थिति में हम विश्वचक्र की गति के साथ तारतम्य स्थापित नहीं कर पाएँगे।

सारा संसार ही त्याग धर्म पर चल रहा है, अतः संग्रह और रोके रखने की वृत्ति हमारे जीवन में संघर्ष पैदा कर देगी। यहाँ का धर्म है कि जीवन को गति देने के लिए कुछ-न-कुछ त्याग करते रहा जाए। यदि हम चाहेंगे कि 'मैं नहीं दूँगा', 'मैं नहीं छोड़ूँगा' ऐसी स्थित में प्रकृति के विरोध का सामना करना पड़ेगा और तब हमको विवश होकर छोड़ना पड़ेगा, एक पराजित योद्धा की तरह। फिर क्यों न स्वेच्छा से त्याग करके विश्वक्रम में सहयोग किया जाए। इससे दो लाभ होंगे—एक स्वधर्मपालन करने का संतोष मिलेगा तो दूसरे हमारा जीवन एकाकी, संकीर्ण न रहकर व्यापक हो जाएगा। हमारा जीवन विकसित होगा।

चूँकि त्याग एक को हटाकर दूसरे की प्रतिष्ठा का अवसर देता है, इसलिए मन, कर्म, वचन से अशुभ का भी त्याग करना चाहिए। जिस तरह द्वार के किवाड़ों को खोलते ही सूर्य का प्रकाश सहज ही भवन को प्रकाशित कर देता है, उसी तरह जीवन से अशुद्ध तत्त्वों को निकाल देने पर शुभ का आगमन स्वतः हो जाता है, बुराइयों के छूटते ही अच्छाइयाँ स्वतः पैदा हो जाती हैं। क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, मोह, ममता, लोभ आदि बुराइयों के छूटने पर दया, प्रेम, करुणा, श्रद्धा, तितिक्षा, शम, दम आदि सत् तत्त्वों का उदय होने लगता है।

फरवरी, 2022 : अखण्ड ज्योति

विषय-वासना जीवन की विकृति है। यह त्याज्य है। विषय-वासना और उससे प्रेरित भोगों का त्याग करना आवश्यक है, क्योंकि इनके रहते हुए जीवन में उच्च आदर्शों की प्रतिष्ठा संभव नहीं होती। मनुष्य की शक्तियाँ न्यून एवं क्षीण हो जाती हैं। इनमें लिप्त रहने से, आध्यात्मिक एवं भौतिक— किसी भी क्षेत्र में ऐसी सफलता नहीं मिलती, जिससे संतोष मिल सके। विषय-भोगों का चिंतन जीवन में कई तरह की विषमताएँ पैदा कर देता है। गीता का मंत्र है—

#### ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते। संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते॥

अर्थात 'विषयों का चिंतन करने से उनमें आसिक्त पैदा हो जाती है। विषयों की आसिक्त से कामना उत्पन्न होती है और कामना यदि पूर्ण न हो तो क्रोध की उत्पत्ति होती है।'

इस तरह विषयों के चिंतन मात्र से ही अनेकानेक मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं और मनुष्य अपने श्रेय पथ से विचलित हो जाता है। लिप्सा चाहे विषय-भोगों की हो या धन-दौलत की या पद-प्रतिष्ठा की, उसे मानसिक और व्यावहारिक क्षेत्र से सर्वथा दूर करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। मन में रहने वाली उस इच्छा एवं रुचि तक का भी त्याग करना चाहिए, जिससे विषय-भोगों की तृष्णा बढ़े, जिससे लोभ, मोह, अभिमान आदि को पोषण मिलता हो।

स्वाद में आसिक भी ठीक नहीं है। ऐसे भोजन का त्याग करना चाहिए, जिससे स्वाद में आसिक बढ़ती हो, जिससे आलस्य-प्रमाद बढ़ता हो, जो तामसी, बासी, गंदा और किसी का जूठा हो एवं जो अनीतिपूर्वक कमाई से प्राप्त हुआ हो। शुद्ध, सात्त्विक, ताजा, हलका, पौष्टिक और पसीने की कमाई से प्राप्त हुआ भोजन ही शरीर को स्वस्थ एवं पष्ट रखता है।

जीवन में वाणी का संयम भी आवश्यक है। वाणी से असत्य वचन, चापलूसी, परनिंदा, कटु भाषण, व्यर्थ वार्तालाप का त्याग करना चाहिए; क्योंकि ये अशुभ और अमंगलकारी हैं। इनसे जीवन में कलह, पश्चात्ताप, लड़ाई-झगड़े, अशांति पैदा हो सकते हैं। परस्पर के संबंध खराब हो जाते हैं। साथ ही हमें अवांछनीय प्रसंगों से भी दूर रहना चाहिए। उन सभी दृश्यों तथा प्रसंगों से दूर रहना चाहिए, जिनसे दूषित मनोभावों, वासनाओं को पोषण मिलता हो।

मनुष्य जो कुछ भी देखता है, उसकी प्रतिक्रिया मन पर होती है, वह प्रबल हो उठता है और मनुष्य को वैसा ही करने की प्रेरणा देता है। किसी भी स्थिति में बुरे काम करना, बुरा सोचना और बुरा चाहना त्याज्य है। इतना ही नहीं, बुरा देखने और सुनने से भी दूर रहना चाहिए।

\*

इस तरह जीवन के सभी क्षेत्रों से अशुभ का त्याग करना चाहिए, जिससे शुभ का उदय हो। कई बार हम लोग उत्तेजनाजन्य मनोभावों में गलत चीजों को त्यागने लगते हैं। साधन-वस्तु अथवा अपनी जिम्मेदारी और कर्तव्यों का त्याग करते हैं। कोई परिवार छोड़ देते हैं, तो कोई वस्त्र या वस्तु विशेष का त्याग करते हैं। लेकिन इनसे तो त्याग की आवश्यकता पूर्ण नहीं होती, न उसकी परिभाषा सार्थक होती है।

ध्यान देने वाली बात है कि त्याग का मूलाधार मनुष्य की मन:स्थिति है। इच्छा और कामनाओं का त्याग, अहंकार, स्पृहा, मोह, मनोभावों का त्याग ही सच्चा त्याग है। जब तक मनुष्य इन दूषित मनोभावों का त्याग नहीं करता, तब तक उसे शांति और संतोष की प्राप्ति नहीं होती, चाहे वह बाहरी त्याग के कितने ही प्रयत्न क्यों न करता रहे।

गीताकार ने इसी तथ्य का प्रतिपादन करते हुए लिखा है—

#### विहाय कामान्यः सर्वान्युमांश्चरति निःस्पृहः। निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति॥

'सभी कामनाओं को छोड़कर, सब ओर से निस्पृह, ममतारहित, अहंकार का त्याग करने वाला शांति को प्राप्त करता है।'

हम संपत्ति का त्याग करते हैं, किंतु मन में स्थित लोभवृत्ति को नहीं छोड़ते। घर-परिवार का त्याग करते हैं, किंतु ममता, मोह का त्याग नहीं करते। स्थान, पद, अधिकार छोड़ देते हैं, किंतु अहंकार नहीं छोड़ते। इसी कारण हम सदैव अशांत और अस्थिर बने रहते हैं। त्याग यदि सच्चे मन से किया जाए तो उससे शांति, संतोष की प्राप्ति होती है, किंतु हम आवेश में आकर या दिखावे के लिए बाहरी त्याग करते हैं। इनको छोड़े बिना कहीं भी एकांत, वन, गिरि-गुफाओं में ही क्यों न रहा जाए, शांति एवं आत्मसुख नहीं मिलता।

इस तरह अपनी दूषित कामनाओं, अवांछनीय इच्छाओं, कलुषित वासनाओं तथा दूषित मनोभावों का त्याग न करके

**४४४,४४४४४४४४,९४४४४४४ ▶**'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **∢**४४४४४४४४४४४४४४४

जो प्रवृत्तियों का बलात् त्याग करता है, गीताकार ने उसे अहंकारी कहा है। ऐसे व्यक्ति अपने आदर्श एवं लक्ष्य से जल्दी ही विचलित हो जाते हैं। जिन्होंने शरीर-क्रिया का त्याग किया और जो मन से विषयों का चिंतन करते हैं, ऐसे लोग पथभ्रष्ट हो जाते हैं। योगभ्रष्ट होने वाले साधक इसी श्रेणी में आते हैं। अत: हमें त्याग के समुचित मर्म को समझना चाहिए और मन से त्याग की वृत्ति अपनानी चाहिए।

जिस प्रकार शारीरिक अपविष्ट पदार्थों को त्याग करने से स्वास्थ्य लाभ होता है, उसी प्रकार मानसिक विकारों को त्यागने से मन शांत एवं भाव स्थिर होता है। अत: त्याग ही जीवन को प्राप्ति और प्रगित का मार्ग प्रशस्त करता है। त्याग से ही जीवन में गित, प्रगित एवं विकास के द्वार खुलते हैं। ऐसा त्याग ही श्रेष्ठ एवं श्रेयस्कर है।

राजकुमार नीरव के लिए महर्षि ऐलुष ने आश्रम में रहने का सामान्य प्रबंध कर दिया। उस दिन पहली बार उन्होंने सादा भोजन किया। आश्रम की जीवनपद्धित बहुत कष्टपूर्ण थी। इतना रूखा जीवन उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था, इसलिए अरुचि होना कुछ स्वाभाविक ही था। सोने के लिए जाने से पहले एक अन्य स्नातक से राजकुमार ने पूछा—''आप कहाँ से आए हैं? आश्रम में आपको कितने दिन हो गए?'' स्नातक ने उत्तर दिया—''मित्र! मैं उपकौशल का राजकुमार हूँ और यह मेरा समापन वर्ष है।'' इसके आगे बात न हो सकी।

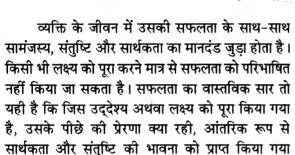
राजकुमार नीरव ने फिर विश्राम किया। सूर्योदय से दो घड़ी पहले जब स्नातक जागे, प्रार्थना हुई, तो नीरव की भी नींद टूटी। आश्रम का नियम था कि सभी स्नातक भिक्षाटन के लिए जाते थे। नियम के बारे में जानकर नीरव का अहं भाव जाग पड़ा था। राजकुमार और भिक्षा माँगे। उनके अंतः करण ने प्रतिवाद किया, किंतु वह भिक्षापात्र लिए एक गाँव में गए। किसी के दरवाजे पर जाते उसे लज्जा हो रही थी।

गाँव के प्रमुख की कन्या विद्या ने उस संकोच को पहचान लिया। उसने एक मुट्ठी धान्य लिया और नीरव के समीप ले जाकर भिक्षापात्र में डालने के बजाय जमीन पर गिरा दिया। हतप्रभ नीरव ने नैराश्य शब्दों में विद्या से पूछा—''देवी! यदि अन्न फेंकना ही था तो आप उसे यहाँ तक लाई ही क्यों?'' विद्या ने कहा—''तात्! मैं ही क्या, सारा संसार ही ऐसा किया करता है। हम जिस उद्देश्य से दुनिया में आते हैं, उसे पूरा नहीं करते, तो यह धान्य बाहर गिराने जैसा ही अपराध हुआ या नहीं?'' विद्या के उदाहरण ने नीरव की आँखें खोल दीं और अगले ही क्षण वह आत्मपरिष्कार की साधना हेतु संलग्न हो गया।

०००००००००० ▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **◄**००००००००००

### ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार— 154

### - ओप्ट्यात्मिक प्रक्रियाओं का ऑत्मराताष पर प्रभाव



यदि नहीं तो फिर ऐसी सफलता एकांगी रह जाती है और व्यक्ति में विक्षोभ, आत्मग्लानि, कुंठा, अशांति जैसी अनेकों आंतरिक दुर्बलताओं के रूप में कष्टदायी बन जाती है। जीवन को ऐसी दुर्भाग्यशाली परिणति से बचाने के लिए आवश्यक है कि प्रारंभ से ही सजगता अपनाई जाए एवं व्यक्तित्व में उन विशेषताओं को उत्पन्न किया जाए, जिनसे किए जाने वाले कार्यों के प्रति रुचि, प्रेरणा आदि बनी रहे और कार्यक्षेत्र के हर स्तर पर सामंजस्य स्थापित हो सके।

अथवा नहीं ?

वर्तमान समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग विभिन्न दफ्तरों, संस्थानों, निकायों में कार्य करता है। नौकरीपेशा के कार्य में संलग्न इस वर्ग की वैसे तो अनेक चुनौतियाँ और समस्याएँ हैं, परंतु असंतुष्टि और असमायोजन जैसी स्थितियाँ ज्यादा प्रभावित करती हैं। ऐसी समस्याओं से बचने या उबरने के उपाय बाह्य परिस्थितियों से ज्यादा व्यक्ति की आंतरिक विशेषताओं एवं गुणों पर निर्भर करते हैं।

व्यक्तित्व की इन आंतिरक विशेषताओं को मनोवैज्ञानिक भाषा में आध्यात्मिक पूँजी के रूप में दरसाया गया है। इसके अंतर्गत व्यक्ति की सजगता, दृष्टिकोण, मूल्य, अनुभूति क्षमता, संवादितता, स्विनर्भरता, सकारात्मक प्रतिक्रियाएँ जैसे बहुमुल्य गुणों को सिम्मिलित किया गया है। इन गुणों के आधार पर व्यक्ति के कार्यक्षेत्र में उसकी सफलता के साथ-साथ संतुष्टि, सामंजस्य, प्रेरणाशक्ति जैसी क्षमताओं का आकलन कर पाना संभव है।

इस संदर्भ में उल्लेखनीय पहल करते हुए देव संस्कृति विश्वविद्यालय में योग विज्ञान विभाग के अंतर्गत एक महत्त्वपूर्ण



शोधकार्य संपन्न कराया गया है। व्यक्ति के जीवन में अंतर्निहित कार्यों की जानकारी से युक्त यह शोधकार्य मुख्य रूप से व्यावसायिक एवं स्वायत्त संस्थानों में कार्य करने वाले लोगों से संबंधित है, लेकिन इसके साथ ही यह अन्य कार्यक्षेत्रों में काम करने वाले लोगों, कर्मचारियों के लिए भी अत्यंत उपादेयी है।

सन् 2016 में विश्वविद्यालय की शोधार्थी शोभा पांडे द्वारा संपन्न यह शोधकार्य विश्वविद्यालय के श्रद्धेय कुलाधिपति डाँ० प्रणव पण्ड्या जी के विशेष संरक्षण एवं प्रतिकुलपति जी के निर्देशन में पूरा किया गया है। इस अध्ययन का विषय है—'इम्पैक्ट ऑफ स्पिरिचुअल कैपिटल ऑन लाइफ सैटिसफैक्शन, वर्क एडजस्टमेंट एंड वर्क मोटिवेशन अमंग एंप्लाईज—एन एक्सप्लोरेटरी स्टडी।'

वैज्ञानिक अध्ययन विधि से संपन्न किए गए इस प्रायोगिक एवं विवेचनात्मक विधि पर आधृत शोधकार्य के लिए शोधार्थी द्वारा हरिद्वार (उत्तराखंड) एवं पटना (बिहार) से कोटा परीक्षण विधि द्वारा कुल 240 कर्मचारियों का चयन किया गया। ये सभी उक्त स्थानों की निजी कंपनियों के नियमित कर्मचारी थे एवं सभी की न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता 12th व उम्र 25 से 40 वर्ष के मध्य थी।

अध्ययन के लिए आवश्यक तथ्यों एवं जानकारियों को प्राप्त करने के लिए प्रयोग के अंतर्गत जिन शोध उपकरणों को प्रयुक्त किया गया है, वे हैं—(1) शोधार्थी द्वारा शोध निर्देशक के मार्गदर्शन में निर्मित किया गया स्पीरिचुअल कैपिटल स्केल, (2) डॉ० क्यू० जी० आलम एवं डॉ० राम जी श्रीवास्तव (2001) द्वारा निर्मित लाइफ सैटिसफैक्शन स्केल, (3) ओ० पी० मिश्रा एवं एस० के० श्रीवास्तव (1992) द्वारा निर्मित वर्क एडजस्टमेंट इन्वेन्ट्री एवं (4) के० जी० अग्रवाल द्वारा निर्मित वर्क मोटिवेशन क्वेश्चनायर (WMQ-A)।

शोधार्थी ने इस अध्ययन की प्रयोग-प्रक्रिया में सर्वप्रथम हरिद्वार और पटना के अलग-अलग निजी संस्थानों के लगभग आठ सौ कर्मचारियों से स्पीरिचुअल कैपिटल स्केल

**०००,०००,०००,००००० ▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ∢००००००००००००००**ँ

के माध्यम से तथ्यात्मक जानकारी एकतित को एवं उनमें से संधे प्रमारे संपूर्ण व्यक्तित को रेज जीवन से हैं। व्यक्ति के जीवन कैंपिटलाहित लोगों का चयन कर दोनों समूहों में सामा रूप से पुरुष एवं महिलाओं को वर्गांकृत किया।

इसके पश्चात प्रयोग में सिम्मिलित सभी 240 चयनित कर्मवादियों से लाइफ सेटियलेक्सन रकेल, वर्क एडजल्टमेंट इस तक्मीन को प्रदेश कर में एडजल्टमेंट इस तक्मीन को प्रदेश के मोटिवेशन ववेश्वचाय के माध्यम से जानकारी एकत्रित को गई। शोध उपकरणों के द्वारा प्राप्त किए गए शोध प्रवेश में हों जीवन कर्मचादियों को हुला गया विक्र स्थाप कर पर शोध परिणाम के रूप में यह पाया गया कि स्थारित्य कर किए जल्पाय से वानकारीयों को हुला गया गया कि स्थारित्य अल कैपिटल वाले कर्मचादियों को हुला में जीवन संतुष्टि, कार्य सामंत्र प्रवेश के अभाव के कारण व्यक्ति में अवंतुष्ट के अभाव के कारण व्यक्ति में अवंतुष्ट के साम करण व्यक्ति के अध्या परचा पत्र हि के अध्या परचा कार्य के अधार पर कहा जा सकता है कि स्थारित्य कर कारण में अधार पर कहा जा सकता है के क्यारित्य के अध्या परच के निकर्ष के आधार पर कहा जा सकता है के क्यारित्य के कारण में चान करने तार हों है। अध्यात करने विक्रयेश पर कहा चार हिती है। अध्यात करने विक्रयेश पर कहा जा सह कार हिता है, वे कार्यव्य के निकर्ष के आधार पर कहा जा सकता है के स्थारित्य कर कर परणामों के आधार पर कहा जा सकता है के स्थारित्य कर कर परणामों के आधार पर कहा जा सकता है के कि इसके परिणामों के आधार पर कहा जो सकता है है जो उपयोग के लिए अप्ता है के समता कर तही है जो अध्या उद्देश्यों को तिच्यंक संपन करने कर तही हो है जि स्थार के कि परणामों में जो विक्रये कर तही हो है जि स्थार के कि परणामों में आधार पर कहा जो सकता है है वह कर के जोवन में परित्य के सामाहित कर विक्रयेश पर निकर के जोवन में परित्व के स्थार है के अध्या कर तही है और अपनी विक्रयेश पर कहा जो से सुरिष्ट का अपना हो अध्यात के के अधार परच कर तही है और अपनी विक्रयेश से तहित है और अधार परच कर तही है और अपनी विक्रयेश से तहित है अध्यात के स्थार है के कि इसके अधार परच कर तही है और सामावित कर तही है और सामावित कर विक्रयेश से सुरिष्ट के स्थार के कि स्थार के कि स्थार के स्थार के अध्या से सुरिष्ट के स्थार के सुरिप के सामावित के अधार के उपने सुरि हित कर के अधार के कि सुरिप के सुरिप के सु

........

असंतोष. निराशा. निरर्थकता जैसी समस्याएँ स्वत: जन्म ले शोध अध्ययन अपने छोटे से प्रयास में हम सभी के लिए 🕉 लेती हैं। अत: ऐसी समस्याओं से बचने एवं सफल, सार्थक इसी अमुल्य जानकारी को प्रस्तुत करता है और हमें व्यक्तित्व व संतुष्टिपूर्ण जीवन की दशा-दिशा के निर्धारण हेतु आवश्यक की आध्यात्मिक पूँजी को जानने एवं प्राप्त करने की प्रेरणा है कि हमारे भीतर आध्यात्मिक पूँजी का भंडार हो। यह देता है। (शोधग्रंथ प्रकाशनार्थ दिया गया है।)

\*\*\*\*\*\*\*\*

भगवान बुद्ध कपिलवस्तु पधारे। धर्मपत्नी यशोधरा का त्याग ही उन्हें इस स्थिति तक पहुँचा पाया था, यह भी उन्हें स्मरण था। वे महल पहुँचे और सस्नेह यशोधरा से पूछा—''यशोधरे! कुशल से तो हो ?'' ''हाँ स्वामी!'' चिरप्रतीक्षित स्वर सुनकर यशोधरा का हृदय गद्गद हो उठा। ''स्वामी नहीं, भिक्षु कहो यशोधरे! मैं अपना धर्म निभाने आया हूँ। बोलो तुम कुछ भिक्षा दे सकोगी ?'' बुद्ध के आदेश व आग्रह को सुन यशोधरा कुछ क्षणों के लिए विचारमग्न हुई व दु:खित होती कहने लगी—''अब बचा ही क्या है देने के लिए ? अपने दांपत्य की स्मृतियों को छोड़कर और कुछ भी तो नहीं है, जो देने योग्य हो।"

अपने मनोभाव अभिव्यक्त कर यशोधरा ने बुद्ध की प्रशांत छवि को निहारा व कुछ क्षण निर्विचार की अवस्था में उसके चेहरे पर निश्चय के भाव उभरे और बोली—''भंते! अपने पूर्व संबंधों को ही दृष्टिगत रखकर क्या आप भी कुछ प्रतिपादन कर सकेंगे ?'' 'भिक्षु धर्म की मर्यादा का उल्लंघन न होता होगा तो अवश्य करूँगा। आर्ये!'' बुद्ध ने आश्वासन दिया। यशोधरा ने अपने पुत्र राहुल को पुकारा और तथागत की ओर उन्मुख होकर बोली—''तो भगवन्! राहुल को भी अपनी पित-परंपरा निभाने देकर उसे अपना अधिकार पाने दीजिए।''

बुद्ध की मौन स्वीकृति पाकर वह राहुल से बोली—''जाओ पुत्र! अपनी पित-परंपरा का अनुकरण करो। बुद्ध की शरण में, धर्म की शरण में, संघ की शरण में जाओ।'' माता के आदेश व पिता के समर्थन को देख उत्साहित व आनंदित राहुल के समवेत स्वरों में गूँज उठा — बुद्धं शरणं गच्छामि। यशोधरा एवं सिद्धार्थ की श्रेष्ठ संतित राहुल भी इसी परंपरा में सिम्मिलित हो गए, जिसे स्वयं सिद्धार्थ—गौतम बुद्ध ने आरंभ किया था। पति के अभाव में भी अपनी संतति को उच्चतम संस्कार देने का श्रेय यशोधरा ने पाया व गौरवान्वित हुई।

स्यं के देश जापान में भारतीय धर्म की पताका आज भा भा फरा पर ही है, उन्हें जापान में मुहतेन नाम से व्यापक स्तर पर पूजा जाता है। इस होत नाम से व्यापक स्तर पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और जलावेय उक्कात से बचाव पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और जलावेय उक्कात से बचाव पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और जलावेय उक्कात से बचाव पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और जलावेय उक्कात से बचाव पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और जलावेय उक्कात से बचाव पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और जलावेय उक्कात से बचाव पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और जलावेय उक्कात से बचाव पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और जलावेय उक्कात से बचाव पर पूजा जाता है। इन्हें सुखे और उक्ता है, जहीं यदा चक्ता बात है। इन्हें सुखे में देश को जुकाय पहला है। विकाल का पशल मों पहले हैं अर्थात वहीं हिंदू अल्यसंख्यक वर्णों में आते हैं, लेकिन हिंदू रेवी – देवताओं की तहां परता है। आता है। जलादों देव निभा रहे हैं। जापान में स्वाच निभा रहे हैं। जापान में भाग्य के सात देवी – देवताओं में चार तो हिंदू मुला के हैं, यथा—बैजाइतेन (सरस्वती), विश्वभान जाय कुकेर), डाइकोकुटेन (महाकाल, हिया) और विजाल के साथ इनका विकराल स्वरूप में मनक आइको), डाइकोकुटेन (महाकाल, हिया) और विजाल के साथ इनका विकराल स्वरूप मं मनक आइको है। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका परवा में त्रियु सुला के हैं यहां विकराल स्वरूप मं माज जाता है। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका परवा में त्रियु सुला के सुके सुके सुके में सुके हो। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका परवा में त्रियु के कप में मुज जित है। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका परवा में त्रियु के कप में मुज जित है। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका माज काली है। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका माज काली है। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका माज काली है। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका माज काली है। अपनी तोखी माज निकर सुके हिंदी भी माज जाता है। अपनी तोखी चोंच के साथ उनका माज काली है। अपनी तोखी माज काली है। अपनी तोखी चोंच के साथ में सुके कप में मुज जित है। अपनी के ताथ पर सुके माज काली है। अपनी तोखी माज के हिंदी भी माज जाता है। अपनी तोखी है। यहा के हिंदी माज जाता है। इनके अनुसा सुके हैं है। अपनी को ताली में के सुके सुके में सुके हिंदी भी माज जाता है। इनके अधिकार मोज उनका में हैं। अपनी को निकर पुल है है। भी ताली के ताथ पुल है है। अपनी के ताथ पु

फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

युगगीता —261

\* \* \* \* \*

# अधम थानियां में गिरते हैं आसुरी वृत्ति वाले मनुष्य



फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

है कि वे उस अवसर को गँवा बैठते हैं और पतनोन्मख हो जाते हैं। इसीलिए भगवान यहाँ पर कहते हैं कि 'ततो यान्त्यधमाम् गतिम्'-अर्थात आसुरी योनियों में गिरने पर चाहते तो वे बलि, प्रह्लाद, विरोचन की तरह से अपने कर्मों को धोकर उच्च पद को प्राप्त कर सकते थे, पर वे इसके विपरीत-इससे भी ज्यादा अधम लोकों को प्राप्त होते हैं।

पराणों में पथ्वी से नीचे अधम लोकों का विवरण आता है। वहाँ कहते हैं कि पृथ्वी के नीचे सात भूविवर हैं या नरक हैं। इनमें से प्रथम का नाम अतल बताया गया है. जिसका निर्माण मय दानव के द्वारा किया गया, ऐसा शास्त्र बताते हैं। इसके नीचे वितल, उसके नीचे सुतल, फिर तलातल, फिर महातल, फिर रसातल और फिर पाताल का वर्णन पुराणों में आता है। इसके अतिरिक्त पुराणों में नरकों का और भी विस्तृत विवरण मिलता है। कहीं-कहीं पर अट्ठाईस नरकों का वर्णन है तो कहीं पर इक्कीस हैं।

पौराणिक वर्णन के अनुसार अधम लोक के 28 नरकों के नाम—तामिस्र, अंधतामिस्र, दौख, महादौख, कुंभीपाक, कालसूत्र, असिपत्न, शुकरमुख, अंधकूप, कृमिभोज, संदंश, तप्तसूर्मि, वज्रकंटकशाल्मली, वैतरणी, पूर्योद, प्राणरोध, विशसन, लालाभक्ष, सारमेपादन, अवीचि, अयःपान, क्षारकर्दम, रक्षोगण-भोजन, शूलप्रेत, दंदशूल, अवटारोध, पर्यावर्तन और सूचीमुख हैं। इनमें फिर अलग-अलग नरकों में गिरने के कारण और वहाँ मिलने वाली यातनाओं का वर्णन भी मिलता है।

उदाहरण के तौर पर जो दूसरे के धन इत्यादि को चुराता है, उसके सामान का अपहरण करता है, उसे यमदुतों के द्वारा कालपाश में बाँधकर 'तामिस्र' नामक नरक में ले जाने का विवरण श्रीमद्देवीभागवत में आता है। व्यभिचार करने वाले को 'अंधतामिस्र' में गिरना पडता है। जो मात्र 'मैं' और 'मेरा' ऐसे विचार को करते हुए जीवन गुजार देता है, वह 'दौख' नामक नरक में गिरता है, जहाँ रूरू नामक भयंकर प्राणियों के द्वारा उसे कष्ट को भोगना पडता है। पश्-पक्षी आदि जीवों को अकारण कष्ट देने वाला 'कुं भीपाक' नामक

पिता से वैर रखने वाला प्राणी 'कालसूत्र' नामक नरक में गिरता है और पाखंड का आश्रय लेने वाला ' असिपत्न' नरक में जाता है । जो व्यक्ति अपने अधिकारों का दुरुपयोग करते हुए दूसरों के साथ क्रूर कर्म करता है, वह 'शुकरमुख' नामक नरक में जाता है। दूसरों को व्यथित देखते हुए भी जो उनको कष्ट देता है, ऐसे व्यक्ति को 'अंधक्प' नामक नरक में जाना पडता है। अपने स्वार्थ पर ही सारा ध्यान केंद्रित रखने वाला 'कमिभोज' नामक नरक में गिरता है। परिश्रम से अर्जित दूसरों के धन-वस्तुओं पर जबरन आधिपत्य जमाने वाला 'संदंश' नरक में जाता है तो अनैतिक संबंध रखने वाले 'तप्तसर्मि' नामक नरक में गिरते हैं। जीवनभर व्यभिचारपूर्वक मानसिकता रखने वाला 'शाल्मली' नामक नरक में जाता है।

पुराण कहते हैं कि मर्यादा को भंग करने वाले 'वैतरणी' नामक नरक में गिरते हैं। सदाचार से विमुख होने वाले 'पुयोद' नामक नरक में गिरते हैं । अबोध प्राणियों को अन्यथा कष्ट देने वाले व उनका शिकार करने वाले 'प्राणरोध' नामक नरक में कष्ट पाते हैं तो यज्ञ जैसे पवित्र कर्म में हिंसा करने वालों के लिए, उसमें पशुबलि देने वालों के लिए 'विशसन' नामक नरक सुरक्षित है। कामवासना के वशीभूत होकर कर्म करने वाले 'लालाभक्ष' नरक में जाते हैं। दूसरों को विष देने का कार्य करने वाले, उनकी हत्या करने वाले 'सारमेपादन' नामक नरक में तो दान और धन के लेन-देन में झुठ बोलने वाले 'अवीचि' नामक नरक में गिरते हैं। अभिमानी व्यक्ति जो दूसरों का आदर नहीं करता, वह 'क्षारकर्दम' नामक नरक में गिरता है तथा नरभिक्षयों का जीवन जीने वाले 'रक्षोगण-भोजन' नामक नरक में गिरते हैं। विश्वासघाती 'शूलप्रेत' नामक नरक में तो क्रूर, निर्दयी कर्म करने वाले 'दंदशूल' नामक नरक में गिरते हैं। दूसरों को अँधेरे में रखने वाले 'अवटारोध' नामक नरक में तथा दूसरों को क्रोधित, निरंकुश दृष्टि से देखने वाले 'पर्यावर्तन' नामक नरक में तो वहीं सर्वाधिक अधमी 'सूचीमुख' नामक नरक में जाकर गिरते हैं।

इस तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि जो आसुरी प्रवृत्ति के मनुष्य अवसर मिलने पर अपने कर्मों की शुद्धि नहीं



बढापा जीवन का एक ऐसा सत्य है, जिससे हर इनसान का वास्ता देर-सवेर पडता ही है। यह बात दूसरी है कि जवानी के जोश में इस ओर कोई ध्यान नहीं जाता, न ही कोई इसकी ज्यादा परवाह करता है, लेकिन जीवन के किसी मोड पर जब इसके लक्षण उभरना प्रारंभ हो जाते हैं या कष्ट एवं पीडा से गुजर रहे बुढापे का सामना होता है, तो अधिकांश लोग मायुस हो जाते हैं। जवानी में फसल बोई थी, उसको काटने का समय आ जाता है, तो कदम ठिठक जाते हैं, लेकिन समय रहते इसकी सही तैयारी की जाए और इसके प्रति सजग हुआ जा सके, तो एक उत्साह एवं उल्लासपूर्ण बुढ़ापे को संभव बनाया जा सकता है।

विश्व के उन क्षेत्रों में जहाँ सबसे अधिक लंबी आय वाले स्वस्थ एवं निरोगी लोग रहते हैं, उनके दीर्घायुष्य पर शोध-अध्ययन के आधार पर प्रकट हुए निष्कर्ष खासे प्रेरक एवं अनुकरणीय हैं। दीर्घायुष्य का पहला आधार देखा गया-कोई-न-कोई रचनात्मक कार्य करते रहना, स्वयं को व्यस्त रखना और हर परिस्थिति का प्रसन्नतापूर्वक सामना करने के लिए तत्पर रहना। व्यस्त रहने पर व्यक्ति अनावश्यक कुकल्पनाओं व कुचिंतन से बच जाता है, जो अन्यथा सिर पर सवार होकर प्रकारांतर में तनाव एवं रोग का कारण बनती हैं। व्यस्तता के साथ यदि कार्य सुजनात्मक हो तो जीवन का आनंद कई गुना बढ़ जाता है, क्योंकि हर रचनात्मक कार्य के साथ सुजन का आनंद जीवन की गुणवत्ता को बढा देता है और एक मस्तीभरा जीवन संभव हो पाता है।

दीर्घायुष्य का दूसरा आधार देखा गया—नियमित दिनचर्या और प्राकृतिक जीवन। नियमित दिनचर्या जीवन को सरल बनाती है, अनियमितता एवं अस्त-व्यस्तता से जुड़े अभिशाप से मुक्त करती है और एक सरल-सहज जीवन संभव बनाती है। इसके साथ प्राकृतिक जीवन व्यक्तित्व को उसकी मूल लय से जोड़ता है, जो स्वास्थ्य एवं नीरोगिता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इसके साथ ही दीर्घायुष्य का तीसरा आधार पाया गया— संतुलित, संयमित और सात्त्विक आहार।

आहार का स्वास्थ्य से सीधा संबंध है। सात्त्विक

आहार ऊर्जा के अनावश्यक क्षरण को रोकता है और स्वास्थ्य के स्रोत जीवनीशक्ति को पृष्ट करता है। इसके साथ संतुलित आहार जीवन को हर स्तर पर पोषित करता है और व्यक्ति को हर स्तर पर स्वस्थ एवं नीरोग रखता है।

इसके साथ देखा गया कि सुखमय वृद्धावस्था और दीर्घाय के लिए तीन बातों का विशेष ध्यान रखना आवश्यक होता है, जो उपरोक्त दिए सूत्रों को ही पुष्ट करती हैं। पहला है शारीरिक स्वास्थ्य, दूसरा है आर्थिक आत्मनिर्भरता और तीसरा है मानसिक और आत्मिक स्वास्थ्य। कहने की आवश्यकता नहीं कि आर्थिक रूप से असुरक्षित एवं परमुखापेक्षी जीवन पग-पग पर गहरी मानसिक यंत्रणा और त्रास से गुजरने के लिए विवश होता है, ऐसे में सुखमय बुढ़ापे की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

इसलिए पाया गया है कि आर्थिक आत्मनिर्भरता की उपेक्षा नहीं की जा सकती और इस दिशा में समय रहते उचित प्रयास होने चाहिए। फिर शरीर के साथ मानसिक एवं आत्मिक स्वास्थ्य का अपना महत्त्व है, जिसके लिए नियमित रूप से प्रयास-पुरुषार्थ की आवश्यकता रहती है, जो संतुलित दिनचर्या, प्राकृतिक जीवन, व्यस्तता, कठिन परिश्रम आदि के आधार पर संभव होते हैं। इसमें भी नित्यप्रति के सजग प्रयास अपेक्षित होते हैं।

इन आधारों पर विश्व के हर कोने में कितने ऐसे लोगों के उदाहरण देखे जा सकते हैं, जो सुखमय बुढ़ापे को जी रहे हैं व ऐसे कार्य कर रहे हैं, जो चिकत कर देने वाले हैं। इतिहास के पन्नों में ऐसे तमाम उदाहरण देखने को मिलेंगे, जिन्होंने बड़ी आयु में भी महत्त्वपूर्ण कार्य किए और अंतिम समय तक सिक्रय जीवन जीते रहे। प्रस्तुत हैं कुछ ऐसे ही उदाहरण, जो एक आशाभरे बुढ़ापे की तसवीर पेश करते हैं।

भगवान बुद्ध 82 वर्ष की आयु में निर्वाण को प्राप्त हुए थे तथा लंबी आयु तक धर्म का प्रचार करते हुए पदयात्रा करते रहे। द्रोणाचार्य सौ वर्ष के पार थे व तब भी रणसंग्राम में अग्रणी भूमिका निभाते हुए प्रत्यक्ष मार्गदर्शन

\*\*\*\*

संग्राम में अग्रणी भिमका निभाते रहे और इसके साथ ही वे उत्कृष्ट साहित्य की रचना भी करते रहे। इसी तरह विनोबा जी ने भी जीवन के उत्तराद्ध में लगभग तेरह वर्ष तक लगातार भूदान हेतु देशभर के अधिकांश हिस्सों की पदयात्राएँ की थीं। सन् 1901 को इंग्लैंड में जन्मे सर फ्रांसिस चिचेस्टर ने सन् 1966-67 के दौरान सरकंडे की नाव में अकेले ही पुरे विश्व की परिक्रमा की थी।

इसी तरह कितने सारे दार्शनिक, वैज्ञानिक, कवि, साहित्यकार, राजनीतिज्ञ आदि अंतिम समय तक अपने सुजन कार्य में सिक्रय रहे और मानवता के लिए अपनी अपूर्व सेवाएँ देते रहे। संत सुकरात, प्लेटो, पाइथागोरस, होमर, गैलीलियो, निकोलस कोपर्निकस, विलियम वर्डसवर्थ, वैज्ञानिक थॉमस एडिसन से लेकर न्यूटन, सिसरो, आइंस्टीन, टेनीसन जैसे महामानव इसके प्रेरक उदाहरण हैं। सुकरात 70 वर्ष की आयु में दर्शन की विशद व्याख्या में जुटे हुए थे। प्लेटो अंतिम समय तक कठोर परिश्रम करते रहे और 81 वर्ष की आयु में कलम पकड़े मृत्यु को प्राप्त हुए। टेनिसन 80 वर्ष की आयु में ही क्रासिंग दि बार की रचना कर रहे थे। रॉबर्ट ब्राउनिंग 70 वर्ष में मृत्यु से कुछ पहले सर्वश्रेष्ठ कविताएँ रच रहे थे।

एच०सी० वेल्स ने 70वीं वर्षगाँठ के बाद एक दर्जन से अधिक पुस्तकों की रचना की व यूटोपिया पर आधारित पुस्तकें जीवन के उत्तरार्द्ध में ही लिखी थीं। सिसरो ने मृत्यु से 1 वर्ष पूर्व 63वें वर्ष में ट्रीटाइज ओन ओल्ड एज की रचना की थी। कीरो ने 80 वर्ष की आयु में ग्रीक भाषा सीखी थी। यूनान के साहित्यकार प्लूटार्क ने 75 वर्ष की उम्र में नई भाषा सीखनी प्रारंभ की थी।

इटली के प्रख्यात उपन्यासकार वोकेशियों को ढलती आय में साहित्यकार बनने की सुझी और मुर्द्धन्य कथाकार बन चमके। गर्लनिर रेरवनिस 50 वर्ष तक दर्शन से अपरिचित थे. फिर रुचि जगी और विश्वविख्यात हुए। सुकरात ने 60 वर्ष के पार बुढापे की थकान और उदासी को दूर करने के लिए संगीत को अच्छा माध्यम मान गाना-बजाना सीखा।

विनोबा भावे कई भाषाओं के ज्ञाता थे व अंतिम वर्षों में सबसे कठिन भाषा चीनी सीख रहे थे। दामोदर सातवलेकर ने वेदभाष्य एवं आर्ष साहित्य में सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य 75 की उम्र के बाद प्रारंभ किए और 100 वर्ष तक लिखते रहे। (19.9.1867 से 31.7.1968)। ग्लेडस्टन लंबी उम्र तक राजनीति में सिक्रय रहे. 76 वर्ष तक तीन बार प्रधानमंत्री बने तथा 85 की आयु में उन्होंने 'ओडेसी ऑफ हॉरेस' की रचना की। इसी तरह राजनीति के क्षेत्र में चर्चिल, बैंजामिन फ्रेंकलिन, डिजरैली जैसे लोग वृद्धावस्था की चुनौती के बीच बहुत सिक्रय रहे और समाज की अमुल्य सेवा करते रहे। अमेरिकी अरबपति रॉक फैलर 100 वर्ष तक सक्रिय रहे। हेनरी फोर्ड 82 वर्ष तक चुस्त-दुरुस्त रहे।

इस तरह विश्वभर के ये तमाम उदाहरण जीवन के उत्तरार्द्ध में भी सिक्रय जीवन जी कर मिसाल प्रस्तुत करते हैं। परमपूज्य गुरुदेव एवं परमवंदनीया माताजी के जीवन इसी तरह अंतिम समय तक सक्रियता का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। ये सभी प्रेरक उदाहरण हमें एक ही संदेश देते हैं कि यदि हम जीवन का सही ढंग से नियोजन करना सीख जाएँ तो अपनी रचनात्मक शक्ति के साथ महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी कार्य कर सकते हैं और चुस्ती, स्फूर्ति एवं उमंग-उल्लास भरा जीवन जी सकते हैं।

LE.S. Code

## अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

Demerican y	i i i i i i i i i i i i i i i i i i i	III isi couc	riccount 110.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNR-0183800	1838002102224070

I.O.B. Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura IOBA0001441 144102000000006

## विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

फरवरी, 2022 : अखण्ड ज्योति

\*\*\*\*\*

पछले कई वर्षों में देश में पानी एक बड़ी समस्या के रूप में उपस्कर सामने आया है। इस संकट के कई रूप हैं, जो शहरों और गाँवों में अजाग-अलग दिखते हैं। गांवों में यह खेती और सिंचाई के सामने खड़े संकट के रूप में हैं। त्रावों में यह खेती और सिंचाई के सामने खड़े संकट के रूप में हैं। त्रावों में उहारों में पीने के पानी को कमी के रूप में । पीने के पानी को समस्या गाँवों में भी है, पर मींडिया का ध्यान शहरों पर ज्यादा केंद्रित होने से शहरी समस्या ज्यादा भ्यावह रूप में सामने दिखाई देती है। हम पेयजल के बारे में ही मुन रहे हैं। इस वर्ष लगभग दो लाख लोग साफ पानी की कमी के कारण जान गँवाती हैं। केंद्रीय जल आयोग ने बताया कि देश के दो-तिहाई जलाशयों का स्तर बहुत नीचे चल्ला शहरों को और हो रहा है। उसे देखते हुए शहरों में पानी की समस्या पर देश का ध्यान शहरों को आय एवं का स्वात हो । उसे देखते हुए शहरों में पानी की समस्या पर देश का ध्यान केंद्रित है। इस पेयजल के बार में चन्चई शहर से जैसी तसवीर सामने आई हैं, उन्हें देखकर शेष भारत में भ्रवात हो ते हैं। विगत दिनों केंद्रीय बजट में भारत सकार ने जलशक्ति के हर घर में 'नल से चन्चई बार, पर पर पर पर का ध्यान केंद्रित है। हाल में चेनाई शहर से जेसरहट है। विगत दिनों केंद्रीय बजट में भारत सकार ने जलशक्ति के हर घर में 'नल से पर पर पर पर का ध्यान केंद्रित है। हाल में चेनाई शहर से जेसरहट हो के समस्या आएगा। सरकार ने जलशक्ति के हर घर में 'नल में पत्र के करीब 10 करोड़ लोग पानी की समस्या से परेशान हैं। देश के 21 प्रति आयोग की एक रिपोर्ट के अनुसार देश के करीब 10 करोड़ लोग पानी की समस्या से परेशान हैं। देश के 21 प्रति आयोग की एक रिपोर्ट के अनुसार देश के करीब 10 करोड़ लोग पानी के सामन से परेशान के पर पर है है हैं। हुए और तालाब शहरों में भूमिगत जल लगभग समाज प्राय है। इनके परंपरात का लाभग 70 प्रतिशत क्षेत्रफल पानी से भर मुख अहरों में भूमिगत के पानी को गुणवत्ता के विश्वक स्वक्किक मुचक्किक में मुख आया पहला है। पहले ला मुक हो है। हुए और तालाब शहरों के साम से की हि जितन में हो आप हिए पर्यापत है। यह जा ला से मुख हो है। हुए और तालाब शहरों के साम समस्य पानी की प्रणवता के वैश्वक स्वात का तामा पर रित ला मान पर पर साम ते हैं। यह भी साम साम से में हिए पर्यापत है। हो हम उसका पानी से मान के पर दे हम से के पर से हम से साम हम स पिछले कई वर्षों में देश में पानी एक बड़ी समस्या के

यह हाल उस शहर का है, जो कुछ भारी वर्षा के

\*\*\*\*

फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

\*\*\*

\*\*\*\*

वहाँ उन्होंने अपनी खेती की तकनीक बदल दी है, इसके अलावा समुद्री खारे पानी को मीठा बनाने की बेहतर तकनीक भी उन्होंने विकसित की है। विशेषज्ञों का कहना है कि यदि जमीन के मात्र 5 प्रतिशत क्षेत्र में गिरने वाले वर्षा-जल का संग्रह किया जा सके तो पूरी आबादी को तकरीबन 100 लीटर पानी हर रोज मिल सकता है।

देखा जाए तो भारत में औसत वर्षा करीब 110 सेमी सालाना है; जबिक चीन और अमेरिका जैसे देशों में इसकी आधी है, पर इसके विपरीत वहाँ खेती की पैदावार हमसे बेहतर है। इसलिए हमें जल प्रबंधन पर ध्यान देने की जरूरत है। देश के अनेक इलाकों में जल प्रबंधन के कारगर परंपरागत तरीके प्रचलित हैं, जिनको प्रोत्साहित करने और संरक्षण देने की जरूरत है। इसके अलावा जल-प्रबंधन को एक देशव्यापी आंदोलन का रूप भी दिया जाना चाहिए।

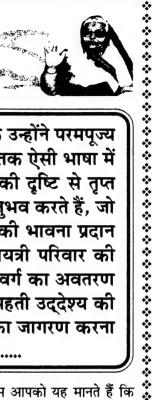
विद्यालयों, कॉलेजों में विद्यार्थियों को इसके बारे में जागरूक करना चाहिए और इससे संबंधित उचित जानकारी भी उन तक पहुँचानी चाहिए। इसमें देश का मीडिया तंत्र जो कार्य कर रहा है, वह सराहनीय तो है, पर उसे इसे और गंभीरता से लेने की जरूरत है। साथ ही ऐसे जल-प्रबंधन के आदर्श उदाहरणों को भी जनसमूह के सामने प्रस्तुत किया जाना चाहिए। ऐसे अनेकों सामूहिक प्रयासों से ही वर्तमान के साथ-साथ आने वाली पीढ़ी को जीवनरूपी जल प्रचुर मात्रा में उपहार रूप में प्रदान किया जा सकता है।

एक बार धर्म और अधर्म दोनों अपने-अपने रथ में बैठकर कहीं जा रहे थे। तभी उन दोनों के रथ एक ही राह में आमने-सामने हो गए। अब कौन दूसरे के लिए रास्ता छोड़े, इस पर उनमें विवाद छिड़ गया। धर्म ने अधर्म से कहा—''भाई! त अधर्म है और मैं धर्म हूँ। मेरा मार्ग ठीक होता है। मैं पुण्यदायक और सभी के द्वारा पुजित व प्रशंसित हूँ, इसलिए मार्ग दिए जाने योग्य मैं ही हूँ।'' अधर्म बोला—''हे धर्म! मैं अधर्म हूँ और इसलिए मार्ग दिए जाने योग्य मैं ही हूँ।'' अधर्म पुन: बोला— ''हे धर्म! मैं अधर्म हूँ और निर्भय व बलवान हूँ। मैंने आज तक कभी भी किसी को मार्ग नहीं दिया। यह मेरे स्वभाव के विरुद्ध है। मैं तुझे मार्ग कैसे दे सकता हूँ ?'' धर्म ने फिर समझाया—''देखो भाई! लोक में पहले धर्म का प्रादुर्भाव हुआ, बाद में अधर्म का। धर्म ही ज्येष्ठ है, धर्म ही श्रेष्ठ है, सनातन है। इसलिए हे कनिष्ठ! तू मुझ ज्येष्ठ के लिए मार्ग छोड़ दे।'' इस पर अधर्म बोला—''ये सब कोई उचित कारण नहीं हैं। आओ, युद्ध करें। जिसकी जीत हो, रास्ता उसी का।'' फिर धर्म ने समझाने की कोशिश की—''मैं चारों दिशाओं में फैला हुआ महाबलवान, यशस्वी व अतुलनीय, परम गुणवान हूँ। तू मुझसे कैसे जीतेगा ?'' अधर्म बोला— ''लोहे से सोना पिघलता है, सोने से लोहा नहीं। आज अधर्म ही धर्म को पराजित करेगा।'' धर्म बड़ा दुःखी हो गया। धर्म ने कहा—''मैं युद्ध नहीं करना चाहता। मैं तेरे वचनों के लिए तुझे क्षमा करते हुए जाने का मार्ग देता हूँ।'' सज्जन लोगों की यही पहचान होती है।

फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी-1

## मनुष्य में देवत्व का उदयः



परमवंदनीया माताजी के उद्बोधनों में यह मौलिकता है कि उन्होंने परमपूज्य गुरुदेव के विचार, दर्शन, योजना एवं उद्देश्यों को जनसामान्य तक ऐसी भाषा में पहुँचाया है कि उनके शब्दों को सुनने वाले न केवल भावना की दृष्टि से तृप्त अनुभव करते हैं, अपितु चिंतन की दृष्टि से ऐसी प्रखरता को अनुभव करते हैं, जो हर गायत्री परिजन को एक नूतन पुरुषार्थ के साथ कार्य करने की भावना प्रदान करती है। ऐसे ही प्रस्तुत इस उद्बोधन में वंदनीया माताजी गायत्री परिवार की स्थापना के उद्देश्य—मनुष्य में देवत्व की स्थापना, धरती पर स्वर्ग का अवतरण की ओर सभी का ध्यान आकर्षित करते हुए कहती हैं कि उस महती उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हममें से प्रत्येक को अपने भीतर एक नवचेतना का जागरण करना अनिवार्य होगा। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को.......

#### मनुष्य में देवत्व के उदय का स्वप्न

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ-

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

आत्मीय परिजनो! बहुत दिन पहले की बात है।
गुरुजी ने और हमने एक स्वप्न देखा था, एक ख्वाब देखा
था। क्या ख्वाब देखा था? यह देखा था कि पृथ्वी पर मानव
में देवत्व का उदय होगा। उन्होंने कहा था कि जब तक
पृथ्वी पर एक भी प्राणी नरक में रहता है, तब तक हमें
अपने लिए उस स्वर्ग की कोई आवश्यकता नहीं है। हम
तब तक स्वर्ग में नहीं जाएँगे। हम इसी पृथ्वी पर रहेंगे।
हमारा मानव समुदाय जो इस नरक में पड़ा है, हम उसी के
साथ में रहेंगे। फिर से आना पड़ेगा तो फिर आएँगे। कब
तक आएँगे? अरे! जब तक हजार जन्म मिलेगा, तब तक
आएँगे। तब तक आएँगे? हाँ! तब तक आएँगे। इसके लिए
जो स्वप्न देखा था, वह आज पूरा हुआ। स्वप्न पूरा हुआ,
लेकिन संकल्प पूरा नहीं हुआ।

बेटे! जो स्वप्न हमने देखा था मानव में देवत्व के उदय का, उसकी साक्षात् मूर्ति हमारे सामने बैठी है। बेटे, आज नन्हे-मुन्ने बच्चों के रूप में हम आपको यह मानते हैं कि भगवान श्रीकृष्ण के समय में आए हुए ग्वाल-बाल हैं। भगवान श्रीकृष्ण के समय जिन ग्वाल-बालों ने जन्म लिया, उन्होंने गोवर्धन पर्वत को उठाने में अपनी लाठी लगाई थी। चेतना भगवान श्रीकृष्ण की थी, लेकिन सामर्थ्य और बल, संकल्पशक्ति उन ग्वाल-बालों की भी थी, जिन्होंने लाठी लगाई। मानते हैं कि कृष्ण यदि प्रेरणा नहीं देते, तो ग्वाल-बाल खड़े नहीं हो सकते थे। उनके अंत:करण में देवत्व को श्रीकृष्ण ने जगाया।

इसी तरह भगवान राम के समय में देवता अपना स्वरूप बदल करके इनसान के रूप में नहीं आए थे, वरन रीछ-वानरों के रूप में आए थे। वे देवता के रूप में मुकुट पहन करके नहीं आए थे, पीतांबर पहन करके नहीं आए थे। किसके रूप में आए थे? गिलहरी के रूप में आए थे, शबरी के रूप में आए थे और वानरों के रूप में, हनुमान, जामवंत आदि अनेक रीछ-वानरों के रूप में देवता आए थे। वे भगवान राम के सहयोगी के रूप में उत्पन्न हुए थे। उन्होंने कैसा गजब का काम किया? उसमें अकेले उनकी सामर्थ्य थी क्या? यदि राम ने उनके

०००००००००००००००० ▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष **∢**००००००००००००००

फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

व्यक्तित्व को ललकारा नहीं होता. तो वे वानर-के-वानर ही रह गए होते।

\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*

#### देवत्व की परिभाषा

\*

बेटे. इसमें किसकी विशेषता है? इसमें भगवान राम की विशेषता है, लेकिन कम विशेषता उनकी भी नहीं है,

संकल्प जगेगा. तो उसे रोकने वाला कोई नहीं होगा। उसे कोई रोक नहीं सकता।

\*

#### गुरुदेव की तपश्चर्या की तीन पूर्णाहतियाँ

बेटे, एक दिन गुरुजी के अंदर संकल्पशक्ति जागी, तो आज तक उसका निर्वाह हो रहा है। अभी जो तीन

बेट, इसमें किसकी विशेषता है? इसमें भगवान राम की विशेषता है? हिंदी के अहा कि भारतीय संस्कृति के विशेषता है लेकिन कम विशेषता उनकी भी नहीं है, जिल्होंने रीछ-वानर होते हुए भी कहा कि भारतीय संस्कृति कहा नो के लिए हम तैयार हैं। हम अपनी जान को बाजी लगा देंगे। हमारी पूँछ में आग लगे-तो-लगे, देखा जाएगा। हमारी जान जाए-तो-जाए, लेकिन अपनी सीता मों जा वापस लाने के लिए हम तैयार हैं। हम अपनी जान को कुरखानी देंगे।

किसने कहा? देवताओं ने कहा। वही देवता, जिल्हें के अग्य भजते हैं। जिससे कहा? देवताओं ने कहा। वही देवता, जिल्हें के अग्य भजते हैं। जाप लोग यह मत समझिए कि हमारा और आपका साथ इसी जन्म का है। नहीं बेट, अनेक जनमों से अस्किर हों। हों। ते से लोग हैं। नहीं तो पड़ोस में बैठे हुए और बहुत हैं हुए आ रहे हैं। नहीं तो पड़ोस में बैठे हुए और बहुत हैं। बेट, जनमें के हैं आवि अपने कच्चे का मापदंड अपनी दृष्टि से करती हैं तो बच्चा अपनी दृष्टि से करती हैं तो बच्चा अपनी दृष्टि से करता हैं। जो हमारी हैं। उस हों। उस हों। जा तान साथ के का समय होते के आप, जाने खुट्टी मिलती हैं। के अपने कहता है कि हमारा बच्चों बीमार हैं, ओई कहता है कि अपने कहता है कि हमारा बच्चों बीमार हैं। कोई कहता है कि अपने के का समय होते कहता है कि हमारा बच्चों बीमार हैं, ओई कहता है कि हमारा बच्चों बीमार हैं। तेर मन में यह कमो पगार इतनी मिलती हैं। उच्चों परता के अतिरक्ष उस मारा हों। परता बच्चों को हों। एक-एक महीने का समय ले करके आप बार कि हीं मिलती हैं। कोई कहता है कि हमारा बच्चों बीमार हैं, ओई कहता है कि हमारा बच्चों बीमार हैं, कोई कहता है कि हमारा वच्चों बीमार हैं। कोई कहता है कि हमारा बच्चों बीमार हैं। उच्चों हों। कोई अपने वाला। लेने वाले के मन में रेठेगों और जिस समस आया हो तहीं। एक मध्ये तो के मम में रेठेगों और जिस समस आया हो तहीं। एक स्वां के हों। एक स्वं के हों। उच्चों हों। उच्चों हों। एक-एक मधीन अपने वाला। लेने वाले के मन में रेठेगों और जिस समस अया हो तहीं। तहीं हों हमने सरकारी हों। रच्चों पर वहीं हों हमने सरकारी हैं। इस हों राय हों। रचे के का जो विवार उच्चों हों हमने सरकारी हों हमने सरकारी हों। उच्चों हों हमने सरकारी हों हमने सरकारी हों। उच्चों हों हमने सरकारी हों हमने सरकारी हों। उच्चों हों हमने सरकारी हों। उच्चों हों हमने सरकारी हों हों। उच्चों हों हमने सरकारी हों।

गई। यह वह माध्यम है, जिससे कि आप हमसे जुड़े हैं और हम आप तक पहुँच सकते हैं। इसके अतिरिक्त और कोई माध्यम नहीं था और कोई माध्यम है भी नहीं, सिवाय ज्ञान के, सिवाय पत्रिका के, जिस पत्रिका से आप जुड़े हुए हैं।

बेटे, अभी तो इस पित्रका के दो लाख सदस्य हैं, लेकिन वह संकल्प भी दूर नहीं है कि आने वाले समय में, अगले वर्ष में 'हीरक जयंती' वर्ष में, जिसको हम सूक्ष्मीकरण की पूर्णाहुति कहते हैं, स्वर्ण जयंती वर्ष कहते हैं, आप सही मानना वह पाँच लाख से कम नहीं होगी। पाँच लाख पित्रका के सदस्य हो जाएँगे, जो जनमानस की चेतना को जगाने के लिए हमारे संकल्प को पूरा करेंगे। तो क्या यह यहीं तक पूरा हो जाएगा? अरे नहीं बेटे, यह तो अभी पाँच लाख है, अभी देखता जा आगे कितना होता है। क्यों? अंत:करण में जो देवता बैठा है न, ये गुरु बैठा है, वह हर समय झकझोरता रहता है। हर समय प्रेरणा देता है कि उठो! उठो!! उठो!!!

बेटे, आज तक सतहत्तर वर्ष की उम्र में भी कोई विराम नहीं। विराम नाम की कोई चीज भी होती है क्या, जाना ही नहीं। सारा जनमानस, सारे विश्व का मानव संप्रदाय विनाश के जिस कगार पर खड़ा हुआ है, जो अग्नि में धधक रहा है, सुलग रहा है, झुलस रहा है, उस पर पानी कौन डालेगा? उसको शीतलता कौन देगा? बेटे, शीतलता देने की बारी जो आती है, वह आपके साहित्य की और आपकी है।

इन दिनों गुरुजी बोलते नहीं हैं, गुरुजी जनमानस तक नहीं पहुँच सकेंगे, लेकिन उनके विचार पहुँचेंगे और आप जो नन्हे-नन्हे दीपक हैं, जब तक साथ प्रज्वलित हो जाएँगे, तो चाहे दीपावली की अँधेरी अमावस्या ही क्यों न हो, उसमें भी तर्क वाले भी आपके बताए हुए रास्ते पर चलेंगे; क्योंकि वे आपसे प्रकाश पाएँगे।

#### दिए गए संकल्प का निर्वहन

बेटे, आप नन्हे हैं तो क्या? आपने हिम्मत तो नहीं हारी है। छोटे हैं तो क्या? नाचीज हैं तो क्या? आपके अंदर जो देवत्व उदय हो चुका है अब, तब इतनी-सी कमी है कि इसको बार-बार जगाना पड़ेगा और उठाना पड़ेगा। आप उठा लेंगे तो समर्थ हो जाएँगे और अगर नहीं उठा पाए, जहाँ-के-तहाँ रहे और बड़े भावावेश में रहे और वहाँ गए तो फिर साफ। तो फिर काम नहीं चलेगा।

यह संकल्प आपने लिया है, आपको उसे बार-बार दोहराना पड़ेगा। दोहराना ही नहीं पड़ेगा, वरन उसके लिए किटबद्ध होना पड़ेगा और आपको उस संकल्प की पूर्ति करनी पड़ेगी और वो है संकल्प की पूर्ति—जो हमारा यज्ञ-आयोजन है। इस यज्ञ-आयोजन में जिन्होंने कि 108 कुंडीय यज्ञ का संकल्प लिया है, इन यज्ञ-आयोजनों में आपको आगे-आगे चलना है। और वहाँ जा करके आपको व्यवस्था बनानी है। यज्ञशालाओं की व्यवस्था बनानी है। अपको अनेक व्यवस्थाओं में हाथ बँटाना है। वहाँ के स्थानीय समाज में घुलना-मिलना है। यज्ञ-आयोजन संपन्न करके फिर आगे चलिए।

बेटे, क्या इस एक यज्ञ से ही, जिसका आपने संकल्प लिया है, उसकी पूर्ति हो जाती है? नहीं बेटे, यह तो शुरुआत है। अभी दो सौ यज्ञों की तो तारीखें निश्चित हो गई हैं। अभी तो आपके द्वारा और यज्ञ होने हैं। आपको विराम नहीं लगाना है। अभी तक हमारे मन में यही विचार था कि बड़ी-बड़ी गाड़ियाँ भेजेंगे और 108 कुंडीय यज्ञ-आयोजन करेंगे।

#### जनचेतना के जागरण के लिए यज्ञ

नहीं बेटे, जनमानस में चेतना जगाने के लिए हम नौ-नौ कुंडीय यज्ञ भी करेंगे, जो हमने अभी तक स्थगित कर रखे थे। अब हम आप सब लोगों से कहते हैं कि आप अब नौ-नौ कुंडीय यज्ञों की भी योजना बनाना। जो बेचारे 108 कुंडीय यज्ञ नहीं कर सकते, वे नौ कुंडीय यज्ञ तो कर ही सकते हैं। उससे जो विचार उठेगा, जो परिष्कार होगा, वह अपने आप में बड़े गजब को होगा। यह बहुत जरूरी है।

बेटे, यह हमारी भारतभूमि कभी यज्ञभूमि थी। अब हम इसको फिर से यज्ञभूमि बनाने जा रहे हैं, जिसमें आप लोग भी शामिल हैं। हमारी यह भारतभूमि यज्ञभूमि होकर के रहेगी। यज्ञ में जो विचार, जो चेतना जागेगी, फिर देखना इस देश में कैसे-कैसे रल पैदा होते हैं। रल तो अभी भी हैं, पर वे मिट्टी में पड़े हुए हैं। अभी वे मिट्टी में से निकले नहीं हैं।

यज्ञ के माध्यम से, विचारों के माध्यम से उन रत्नों को मिट्टी में से निकालना है। उनको झकझोरना है। उनकी ठोढ़ी में हाथ डालना है। अरे भाईसाहब! आप तो ऐसे रत्न हैं, कहाँ मिट्टी में दबे पड़े हैं। कहाँ स्वार्थों

में जकड़े हैं। जरा ऊँचे उठिए। यज्ञमय जीवन जिएँ। ब्रह्ममय जीवन जिएँ। आगे-आगे चलिए। आगे चलिए. जिससे लोगों को प्रेरणा मिले। यह कार्य आपको करना है।

\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*

बेटे, क्या आप अकेले जाइएगा? आप अकेले नहीं जा रहे हैं। आप यह न समझें कि हम अकेले हैं, आप अकेले नहीं हैं। जिस समर्थ सत्ता के हवाले आपने अपने को किया है, वह ऐसा खिवैया है कि उसकी नाव में जो कोई बैठा है, वह डूबा नहीं है। जिसने इनकार कर दिया बैठने से. उसका तो हम कहते नहीं हैं. यद्यपि उसको भी अपनी उँगली पकडाने की कोशिश की और आगे बढाने की कोशिश की, लेकिन जब कुसंस्कार उदय होते हैं, तब तो सब संस्कार बहते हुए चले जाते हैं, क्योंकि उनकी ज्यादा प्रबलता होती है। प्रबलता ही नहीं होती, उन्माद भी रहता है और उन्माद जिधर को चलता है; वह उधर को चलता ही रहता है। अत: वह तो ड्बेगा ही, हम क्या करें?

कहते हैं कि बेटे आगे मत जाओ, गहरा पानी है और वह आगे बढ़ता ही जा रहा है, तो वह डूबेगा ही, हम क्या कर सकते हैं। नहीं बेटे, इस नाव में जो कोई बैठेगा, हमारा प्रत्येक से वादा है कि हम डूबेंगे, तो आप भी डूबेंगे और हम नहीं डूबे तो आप भी नहीं डूबने वाले। किसी भी कीमत पर आप नहीं डूबने वाले। आपके भौतिक साधनों में कमी आती है तो आए, इसके लिए हमारा कोई चैलेंज नहीं है। जब आपका दिमाग केवल भौतिकता की ओर है, तो हम क्या कर सकते हैं। या तो आप भौतिकता ही पा लीजिए या आध्यात्मिकता के मार्ग पर ही चलिए।

#### आध्यात्मिकता का मार्ग

\*\*\*\*

\*\*\*\*\*

\*\*\*\*

बेटे, आध्यात्मिक मार्ग वह है, जिस पर महात्मा गांधी चले, जिस पर विनोबा भावे चले, जिस पर भगवान बुद्ध चले और जिस पर हमारे महापुरुष चले। वह है अध्यात्म मार्ग और जो अध्यात्म मार्ग पर चल जाता है, वह किसी सीमा में बँधकर नहीं रहता। वह असीम बन जाता है और असीम हो जाता है।

तब सारी वसुधा उसकी अपनी हो जाती है और सारा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' उसका परिवार है, कुटुंब है। उसके भाई और भतीजे हैं. उसके बच्चे हैं। फिर वह दो और चार बच्चों से और गृहस्थी से कैसे बँध सकता है। कि हम सारा-का-सारा समाज से ही लेते हैं।

अध्यात्मवादी तो बँधेगा नहीं। वह उन जंजीरों से ख़ुलेगा और आगे बढ़ेगा। सीमा से आगे बढ़ेगा। उत्तरदायित्व निभाने पडेंगे। बीबी है, बच्चे हैं, क्या उनका उत्तरदायित्व नहीं निभाना है ?

अध्यात्मवाद में यह थोड़े ही है कि उत्तरदायित्व से पलायन करें। पलायनवाद नहीं है। यह नहीं है कि यह संसार तो मिथ्या है बच्चा। संसार से हटिए। तो कहाँ जाएँ?

इस धरती पर स्वर्ग का अवतरण और इसी मानव प्राणी में देवत्व का उदय हमें अभीष्ट है और इसके लिए हम भागीरथ तप करेंगे। ज्ञान की गंगा को भूलोक में लाया जाएगा और उसके पुण्य जल में स्नान कराके कोटि-कोटि नर-पशुओं को नर-नारायणों में परिवर्तित किया जाएगा। इसी महान शपथ और व्रत को ज्ञानयज्ञ के रूप में परिवर्तित किया गया है।

विचार क्रांति की आग में गंदगी का कूड़ा-करकट जलाने के लिए होलिका दहन जैसा अपना अभियान है। अनीति और अनौचित्य के गलित कुष्ठ से विश्वमानव का शरीर विमुक्त करेंगे। समग्र कायाकल्प का, युग-परिवर्तन का लक्ष्य पुरा ही किया जाएगा। ज्ञानयज्ञ की चिनगारियाँ विश्व के कोने-कोने में प्रज्वलित होंगी। विचार क्रांति का ज्योतिर्मय प्रवाह जन-जन के मन को स्पर्श करेगा। —परमपूज्य गुरुदेव

कहीं गुफा में बैठ जाइए। फिर क्या कीजिए? अच्छा तो खाना कहाँ से आएगा ? खाना तो समाज से ही आएगा। और पहनने को ? वह भी समाज से आएगा। तो जब सब समाज से ही आएगा, तो समाज को क्यों ठोकर मार रहा है, जब

#### जनमानस के परिष्कार के लिए विचारक्रांति-अभियान

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और सामाजिक प्राणी है तो समाज का जो ऋण है, वह भी प्रत्येक अध्यात्मवादी को चुकाना ही पड़ेगा और चुकाना चाहिए। जिसका कि आपने यह संकल्प लिया है और जिसका कि हमने ख्वाब देखा है और आप लोगों के अंदर इस देवत्व का उदय किया है। देवत्व आपके भीतर आ गया है। अब आप आगे-आगे चलिए। हमारे जो भी आयोजन हैं, जो विचारक्रांति-अभियान है, वह जनमानस के परिष्कार के लिए है।

आज अनेक कुप्रथाओं ने जन्म ले लिया है। दहेज— एक, मृत्युभोज—दो और न जाने क्या-क्या, दुनिया की तमाम कुरीतियों से लेकर के जाने क्या-क्या उदय हो गए हैं। जादू-मंतर, टोना-टोटका, भूत-पलीद न मालूम क्या-क्या पैदा हो गए। बेटे, उन सबका सफाया करना है। आज हमारी बेटियों की लाज जाती है। हमारी बेटियाँ क्वारी रह जाती हैं। आज देखते नहीं बनता कि कैसे-कैसे कन्याएँ प्रताड़ित होती हैं। दहेज के पीछे, दौलत के पीछे हमारी बच्चियाँ कोई फाँसी पर लटकती हैं, कोई आग लगाकर मरती हैं। कोई क्या करती हैं, कोई क्या करती हैं? क्यों सताई जाती हैं हमारी बच्चियाँ?

बेटे, सब सुनकर हमारा कलेजा छलनी हो जाता है। न कुछ कहते बनता है, न कुछ करते बनता है। पर यह सब मानना कि मरती तो वो हैं, पर ऐसा मालूम पड़ता है कि जाने हमारी कौन-सी बेटी जा रही है। इसके लिए किसका उत्तरदायित्व है? इस समाज का है और किसका है। पर आप संकल्प ले सकते हैं कि हम न दहेज लेंगे और न दहेज देंगे, चाहे हमारी बेटी गरीब परिवार में जाएगी-तो-जाएगी। हमें नहीं चाहिए दहेज।

हमको नहीं चाहिए कोई डॉक्टर, नहीं चाहिए कोई इंजीनियर, न कोई चाहिए अफसर। हम तो साधारण मास्टर को अपनी बेटी देंगे, चाहे रिक्शाचालक से करेंगे, लेकिन हम नहीं करेंगे ऐसे भेड़िये से, जो हमारी बच्ची को खा जाए। जिसके घर में पैसा है, वह हमारी बच्ची को क्या इज्जत देगा? वह हमारी बच्ची की इज्जत नहीं कर सकता। हमने जिस बच्ची को खून-पसीने से पाला है, वह हमारे कलेजे का टुकडा है।

#### भगवान राम का आदर्श

उस माँ से पूछिए जिस माँ ने जन्म दिया है और नौ महीने धारण किया है और अपनी बच्ची को पैदा किया है। उसको पढ़ाया-लिखाया है और फिर उस राक्षस के हवाले किया है। वह राक्षस न तो लड़की को जिंदा रहने देता है, न मरने देता है। मरने भी नहीं देता और जिंदा भी नहीं रहने देता। कहता है मेरी पत्नी है। तेरी पत्नी है तो पत्नी के तरीके से रख और ऐसे रख, जैसे भगवान राम ने सीता को रखा था। किसी कारण वनवास तो हो गया था और उसमें धोबी के यहाँ का चक्कर आ गया था, तो सीता को त्यागना पड़ा था, लेकिन अश्वमेध यज्ञ के समय उन्होंने यह कहा था कि यज्ञ संचालन तब होगा, जब सीता साथ बैठेंगी और भगवान राम ने सोने की सीता को साथ में बिठाया था। यह आदर्श तो हमारे प्रत्येक घर में होने ही चाहिए।

बेटे, यह आदर्श आप लोगों को ग्रहण करने हैं। आप लोगों को करना है और अन्य लोगों को बताना है। इसमें मृत्युभोज भी है, इसमें बाल विवाह भी है। इसमें परदा-प्रथा भी है। खैर परदा-प्रथा तो अब नाममात्र की रह गई है। अब तो प्रगतिशील जमाना हो गया है, परदा तो नहीं है, लेकिन हाँ इतना परदा तो चाहे रूढ़िवादी कहें, चाहे जो भी हो, इतना परदा तो होना ही चाहिए। कौन-सा? आँखों का।

साड़ी के पल्ले की कोई कीमत नहीं है कि हमने यहाँ तक कर लिया, वहाँ तक कर लिया, लेकिन आँखों का लिहाज, नम्रता, शालीनता तो हमारे घरों में होनी चाहिए। वह है कहाँ? सब पलायन कर गई आपमें से। यहाँ मैं आपका समय तो ज्यादा नहीं लूँगी, पर मैं एक बात आपसे कह रही थी कि साहित्य के द्वारा जो आपने पढ़ा है, जो आपने समझा है, इस साहित्य को आपको घर-घर पहुँचाना है।

यह आपकी जिम्मेदारी है, आपकी जवाबदारी है। यज्ञायोजन आपको सफल बनाने के लिए आगे आ करके आपको कदम रखना है। अखण्ड ज्योति के ग्राहक तो आप ही बनाएँगे और कौन बनाएगा? हमें बनाना है, आपको बनाना है। आप हमारे हैं तो हमारा फर्ज भी होता है, हमारा कर्त्तव्य भी होता है, हमारा अधिकार भी होता है। आपका अधिकार है हमारे ऊपर, तो हमारा भी तो अधिकार है आपके ऊपर।

बेटे, जबानी जमाखरच करने में आपका क्या जाता है, जरा बताइए। नहीं साहब! घर में ही सड़ते रहेंगे। घर में

. \*\*\*\*\*\* वर्ष **◄** \*\*\*\*\*\*\*\*\* **►** 'गारी सशक्तीकरण' वर्ष **◄** \*\*\*\*\*

नहीं सड़ेंगे, चिलए आप बाहर निकलिए। अगर आप घर में सड़ेंगे, तो फिर आप समझ लीजिए कि हम और गुरुजी घर में आएँगे और आप सोते हुए मिले तो पीछे से एक ऐसा डंडा लगाएँगे कि बस दाल-आटे का भाव याद आ जाएगा बेटे जी को। माताजी इतनी नाराज नहीं होती हैं, पर पिताजी की नाराजगी अभी आपने देखी नहीं है। वे इतने उलटे हो जाते हैं कि कहते नहीं बनता। लोगों की घिष्यी बँध जाती है। कुछ कहने जाते हैं और मुँह से कुछ और निकलता है।

कभी-कभी मैं भी कहती हूँ कि रहने दीजिए, अभी बच्चा है। इतनी जोर से मत डॉंटिए, पर नहीं मानेंगे, तो फिर माँ भी कम नहीं है। माँ का डंडा भी कम नहीं पड़ेगा। जो आपको दिया है, यह यों ही पड़ेगा और यहीं पड़ेगा। ठीक मानना, आपकी पीठ पर यह न पड़े, तो चाहे जो कहना आप, देख लेना। आप कैसे-कैसे प्यारे बच्चे हैं, छाती से लगाने लायक, सीने से चिपकाने लायक। बेटे आपको डंडे क्यों पड़ेंगे? हम नहीं पड़ने देंगे, पर नहीं मानेंगे, तो पड़ेगा ही। धमकाती भी हैं, तो धमकाना भी पड़ेगा। इसलिए यह तो हँसी की बात है, परंतु बेटे, आपको अपने पुरुषार्थ को जगाना होगा।

बेटे, आपको अपने पुरुषार्थ से सारे समाज के लिए, सारे राष्ट्र के लिए पुनर्जागरण का शंख बजाना है, शंख फूँकना है और बिना किसी हिचिकचाहट के आपको अपने विचारों का प्रतिपादन करना है। चाहे आप कम पढ़े-लिखे ही क्यों न हों, आप तो यह कहना कि हम तो माइक हैं साहब! हम चोंगे हैं और हम बल्ब हैं। करेंट तो जनरेटर से आ रहा है, पावर हाउस से आ रहा है। कहाँ से आएगा करेंट? हमारे गुरुजी के विचार हैं, आप उन्हें सुनिए, जिन्होंने हम जैसे नाचीज को आगे बढ़ाया। हम जो गीली मिट्टी थे, उस गीली मिट्टी में उन्होंने हमारे अंदर जान डाली है। क्या उस एहसान को भुला दिया जाएगा। अभी जो लड़के गा रहे थे—इस एहसान को भुलाया न जाएगा। असे बेटे! कैसे भुला सकते हैं? आप भुला सकते हैं? आप नहीं भुला सकते। किसी भी कीमत पर आप भुला नहीं सकते।

[क्रमश: अगले अंक में समापन]

एक राज्य में एक सिद्धपुरुष रहते थे, जिनका नाम अपिकुरु था। वे एक छोटे-से उपवन में कुटिया बनाकर रहते थे। वे सदा प्रसन्नचित्त रहते थे। राजा ने उनके बारे में सुन रखा था। एक बार राजा को उनसे मिलने की इच्छा हुई।

राजा ने अपिकुरु के पास जाकर पूछा—''आपके पास तो कुछ भी नहीं है, फिर आप आनंदित कैसे रहते हैं ?'' अपिकुरु बोले—''महाराज! आवश्यकता से अधिक संग्रह न करके परिश्रम से जो कुछ प्राप्त हो जाए, उसी में संतुष्ट रहना ही हमारे आनंदित रहने का रहस्य है।''

राजा ने कहा—''हम आपको बहुमूल्य उपहार देना चाहते हैं।'' अपिकुरु ने कहा—''महाराज! हमें कोई आवश्यकता नहीं। जितना परमात्मा ने दिया है, उतने में मैं संतुष्ट हूँ।'' राजा यह सुनकर अपिकुरु की संतोषी वृत्ति के समक्ष नतमस्तक हो गए।

फरवरी, 2022 : अखण्ड ज्योति

# विश्वविद्यालय परिसर से-200 > सफलता के सोपानों को छूता विश्वविद्यालय

मानवता के इतिहास में कभी-कभी ऐसे समयों का आगमन होता है, जिनकी तुलना ऐतिहासिक और अविस्मरणीय समयों से की जा सकती है। वर्तमान समय की परिस्थितियाँ ऐसे ही युगांतरकारी समय की परिभाषा को सत्य सिद्ध करती नजर आती हैं। परमपूज्य गुरुदेव ने वर्तमान समय को इसीलिए युग-परिवर्तन का समय कह करके पुकारा और यह कहा कि वर्तमान समय में मानवता के सम्मुख दो तरह के पथ आ खड़े हुए हैं।

इनमें से प्रथम पथ पर बढ़ने पर विनाश एवं विध्वंस के अतिरिक्त और कोई परिणाम प्राप्त होता दिखाई नहीं पड़ता। यह पथ वो पथ है, जहाँ पर मनुष्य स्वार्थ एवं संकीर्णता का सहारा लेता है और मात्र अपने हितों को पूरा करने में जीवन उद्देश्य को निरत कर देता है। दूसरा पथ वह पथ है, जिसे पूज्य गुरुदेव ने शांतिकुंज की स्थापना का आधार माना एवं उस पथ पर चलने वालों को अपने भीतर सन्निहित देवत्व के जागरण के लिए प्रोत्साहित किया। यह पथ शुभ, मंगल और कल्याण की प्राप्ति का पथ है।

आज से लगभग 50 वर्ष पूर्व इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर परमपूज्य गुरुदेव और परमवंदनीया माताजी ने शांतिकुंज की स्थापना की और शांतिकुंज के स्वर्ण जयंती वर्ष में इसी उद्देश्य को स्मरण करते हुए अनेकों ख्यातिप्राप्त विभूतियों का आगमन हुआ। उनके आगमन के साथ ही स्वर्ण जयंती वर्ष व्याख्यानमाला के तहत समस्त गायत्री परिजनों को उनके विचारों से अवगत होने का सौभाग्य प्राप्त हो सका।

इसी क्रम में भारत गणराज्य के गृहमंत्री माननीय श्री अमित शाह जी का आगमन देव संस्कृति विश्वविद्यालय के दिव्य प्रांगण में हुआ। इस अवसर पर 'मनुष्य में देवत्व का उदय, धरती पर स्वर्ग का अवतरण' विषय पर उनका विशिष्ट उद्बोधन भी हुआ। मृत्युंजय सभागार में आयोजित इस कार्यक्रम में उनके अतिरिक्त प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री पुष्कर सिंह धामी जी एवं प्रदेश अध्यक्ष श्री कौशिक जी भी उपस्थित रहे। इस अवसर पर कार्यक्रम की पृष्ठभूमि रखते हुए विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपित जी ने कहा कि शांतिकुंज इस धरती पर दैवी चेतना की उपस्थिति का प्रतीक भी है और प्रमाण भी है। शांतिकुंज की स्थापना का उद्देश्य मनुष्य का भावनात्मक नवनिर्माण करना है; क्योंकि आंतरिक परिवर्तन के बिना कोई भी परिवर्तन स्थायी नहीं हो सकता। इस अवसर पर श्रद्धेय कुलाधिपित जी ने कहा कि हम देश की आध्यात्मिक चेतना को जागरूक करके भारतवर्ष की सांस्कृतिक आधारशिला को मजबूत करने का कार्य करेंगे।

\*\*\*

कार्यक्रम में विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित उत्तराखंड के मुख्यमंत्री श्री पुष्कर सिंह धामी जी ने कहा कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय संस्कृतिसंपन्न महामानवों के निर्माण की टकसाल है। उत्तराखंड को विश्व की आध्यात्मिक और सांस्कृतिक राजधानी बनाने की संकल्पना को साकार करने में वे शांतिकुंज के साथ की अपेक्षा करते हैं।

इस क्रम में मुख्य अतिथि के रूप में अपना उद्बोधन देते हुए माननीय श्री शाह जी ने कहा कि शांतिकुंज की यह पावन धरती दशकों से करोड़ों गायत्री मंत्रों की गूँज से गुंजायमान है और उसके परिणामस्वरूप एक अद्भुत आध्यात्मिक चेतना को वे अनुभव कर पा रहे हैं। वे यह भी बोले कि गायत्री मंत्र हमारे शरीर की ग्रंथियों के जागरण का राजमार्ग है। यदि ये जाग्रत हो जाती हैं तो हमारा जीवन न केवल परिवर्तित होता है, अपितु सौभाग्यशाली भी बनता है।

माननीय श्री अमित शाह जी ने इस अवसर पर पूज्य गुरुदेव द्वारा प्रदत्त नवयुग के संविधान को दोहराया और विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों एवं शांतिकुंज के कार्यकर्ताओं को यह कहा कि वे अत्यंत सौभाग्यशाली हैं कि उन्हें यहाँ रहने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। माननीय श्री अमित शाह जी ने इस विशिष्ट उद्बोधन के साथ विश्वविद्यालय परिसर में प्रतिष्ठित शौर्य दीवार पर पुष्पांजलि भी अर्पित की।

विशिष्ट अतिथियों के आगमन के इस क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के इस प्रांगण में भारतीय नीति आयोग

फरवरी, 2022 : अखण्ड ज्योति

\*\*\*\*\*

के सदस्य एवं प्रधानमंत्री जी की सलाहकार परिषद् के प्रमुख, प्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री विवेक देवराय जी का आगमन हुआ। इस भेंट के क्रम में उनकी मुलाकात देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपित जी से हुई, जिन्होंने उन्हें फुच गुरुदेव के दर्शन व विचारों से अवगत कराया। उल्लेखनीय है कि श्री देवराय जी को पद्मश्री सम्मान से विभूषित किया गया है एवं अर्थशास्त्र पर उनकी 100 से ज्यादा लिखी गई पुस्तकें प्रचलन में हैं। साथ ही भारतीय महाकाव्य महाभारत का अँगरेजी में अनुवाद करने वाले वे अब तक के तीसरे व्यक्ति हैं।

इसी क्रम में लिथुआनिया के राजदूत माननीय श्री जलियस प्रेनेविसियस का आगमन भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हुआ। देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपित जी के साथ अपनी भेंट के क्रम में उन्होंने भारत और लिथुआनिया के पारस्परिक संबंधों को और अधिक प्रगाढ करने की अपनी योजना पर चर्चा की। ज्ञातव्य है कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय के परिकर में एशिया का पहला और अकेला बाल्टिक शिक्षा एवं संस्कृति केंद्र स्थापित है, जिसका उद्देश्य दोनों देशों के मध्य समानताओं का अध्ययन करना और पारस्परिक संबंधों को प्रगाढ़ करना रहा है।

इस भेंट के उपरांत देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपित जी एवं लिथुआनिया के राजदूत देहरादून जाकर उत्तराखंड के राज्यपाल माननीय श्री गुरमीत सिंह जी से मिले एवं उनके साथ मिलकर सभी योजनाओं के कुशल क्रियान्वयन हेतु चर्चा की। सभी ने कोविड-19 की महामारी के कारण उत्तराखंड पर्यटन क्षेत्र में आई चुनौतियों पर विचार-विमर्श किया और इस दिशा में द्विपक्षीय विकास करने पर जोर दिया।

प्रतिष्ठित व्यक्तियों के देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन के अतिरिक्त विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों के पुनः लौटने के साथ ही विभिन्न सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक गतिविधियाँ पूरे जोर-शोर के साथ प्रारंभ हो गईं। इस क्रम में विश्वविद्यालय के पर्यावरण विभाग द्वारा वन्यजीव सप्ताह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर पदमश्री श्री कल्याण सिंह रावत जी का आगमन विश्वविद्यालय में हुआ। देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कुलसचिव श्री देवांगन जी द्वारा उनका भव्य स्वागत हुआ।

आयोजनों के इसी क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान विभाग के द्वारा विश्व मानसिक स्वास्थ्य दिवस पर एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कुलपति आदरणीय श्री शरद पारधी जी एवं विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी भी उपस्थित रहे। अतिथि वक्ताओं के रूप में डॉ॰ रजनीश जैन एवं डॉ॰ प्रदीप खत्री उपस्थित हुए। कार्यक्रम का कुशल संचालन मनोविज्ञान विभाग के समन्वयक डॉ॰ संतोष विश्वकर्मा द्वारा किया गया।

इसी क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कंप्यूटर विभाग द्वारा साइबर सिक्युरिटी माह का आयोजन किया गया। इसके तहत विभिन्न गतिविधियों जैसे-प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता, कार्यशाला, नुक्कड नाटक, जनजागरूकता रैली इत्यादि का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के समापन समारोह में विभिन्न गतिविधियों में विशिष्ट स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को विशेष रूप से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर उपस्थित विश्वविद्यालय के प्रतिकृलपित जी ने विद्यार्थियों द्वारा किए गए प्रयासों को प्रासंगिक एवं सामयिक बताया और यह कहा कि वर्तमान परिस्थितियों में प्रत्येक जिम्मेदार नागरिक को साइबर सिक्यूरिटी की आधारभूत समझ होनी अनिवार्य है। इस अवसर पर कंप्युटर विभाग की विभागाध्यक्षा डॉ॰ राजेश्वरी त्रिवेदी एवं विभाग के सभी आचार्यगण भी उपस्थित रहे।

आयोजनों के इसी क्रम में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के एनिमेशन विभाग द्वारा अंतरराष्ट्रीय एनिमेशन दिवस मनाया गया। कार्यक्रम में विभाग के विद्यार्थियों द्वारा विलक्षण कलाकृतियाँ बनाई गईं। साथ ही विभाग के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों द्वारा तैयार 'पंचमहाभृत' नामक बोर्ड गेम का अनावरण किया गया। यह खेल प्रकृति के पाँच तत्त्वों और हस्तमुद्राओं पर आधारित है. जिसे विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय के रूप में समझा जा सकता है। इस अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कुलपति आदरणीय श्री शरद पारधी जी, प्रतिकुलपति जी, विभाग की विभागाध्यक्षा सुश्री कावेरी बाली जी एवं एनिमेशन विभाग के समस्त आचार्यगण उपस्थित रहे। इस अवसर पर एनिमेशन दिवस पर आयोजित कार्यक्रमों में श्रेष्ठ स्थान पाने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कृत भी किया गया।

गणमान्य अतिथियों के आगमन एवं विशिष्ट आयोजनों के क्रम के संपन्न होने के साथ ही देव संस्कृति विश्वविद्यालय द्वारा विगत दिनों अनेकों महत्त्वपूर्ण अनुबंधों को भी मूर्तरूप प्रदान किया गया। इस क्रम में पहला महत्त्वपूर्ण अनुबंध देव संस्कृति विश्वविद्यालय एवं ऋषिहुड विश्वविद्यालय, सोनीपत के मध्य हुआ। इस अनुबंध का मुख्य उद्देश्य शिक्षण एवं अनुसंधान के क्षेत्र में पारस्परिक हितों की गतिविधियों में संबंधित सूचनाओं के आदान-प्रदान में सहयोग करना है तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अनेकों परियोजनाओं को ध्यान में रखते हुए संयुक्त पाठ्यक्रमों को विकसित करना है।

\*

\*\*\*\*

ऋषिहुड विश्वविद्यालय के सीईओ श्री साहिल अग्रवाल जी ने इसे एक अविस्मरणीय क्षण करार देते हुए कहा कि हमारे विश्वविद्यालय का यह सौभाग्य रहा है कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय का सहयोग हमें सदा प्राप्त होता रहा है। देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपित जी इस विश्वविद्यालय के संरक्षक मंडल के सदस्य भी हैं एवं इस विश्वविद्यालय के विभिन्न अंतरराष्ट्रीय पाठ्यक्रमों को चलाने में देव संस्कृति विश्वविद्यालय हमेशा से मुख्य भूमिका निभाता रहा है।

एक ऐसा ही अनुबंध देव संस्कृति विश्वविद्यालय एवं प्युंडासिओ दे इंवेस्टिंगसिओ एस्ट्रोवेदिका दे चिली के मध्य किया गया। चिली दक्षिण अमेरिका का एक महत्त्वपूर्ण देश है और यह अनुबंध इस दुष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि इस अनुबंध का उद्देश्य देव संस्कृति विश्वविद्यालय के माध्यम से वहाँ के विद्यार्थियों को यज्ञ एवं गायत्री मंत्र की साधनाओं को अपनाने हेतु प्रशिक्षण को प्रदान करना है। देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपित जी ने इस अनुबंध पर हस्ताक्षर करते हुए इसे भारतीय संस्कृति के लिए एक अदुभृत क्षण घोषित किया। 

इसी क्रम में एक अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण अनुबंध देव संस्कृति विश्वविद्यालय एवं प्रतिष्ठित अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय-बर्मिंघम विश्वविद्यालय के मध्य किया गया। इस अनुबंध का उद्देश्य बर्मिंघम विश्वविद्यालय में भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार को बढ़ावा देना है। इस अनुबंध के तहत बर्मिंघम विश्वविद्यालय के 100 विद्यार्थी देव संस्कृति विश्वविद्यालय में भारतीय संस्कृति हेत् प्रशिक्षण को प्राप्त करेंगे। इस अनुबंध पर हस्ताक्षर करते हुए देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपित जी एवं बर्मिंघम विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपित डॉ॰ टिम जोन्स द्वारा इसे एक गौरवशाली क्षण उद्घोषित किया गया।

इसी तरह का एक महत्त्वपूर्ण अनुबंध देव संस्कृति विश्वविद्यालय एवं ग्लोबल नर्सिंग इंस्टिट्यूट के मध्य हुआ। इस अनुबंध के तहत नर्सिंग कॉलेज की छात्राएँ देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कोविड केयर सेंटर एवं शांतिकुंज के जन्म शताब्दी चिकित्सालय में चिकित्सकीय अनुभव को प्राप्त कर सकेंगी। इस अनुबंध के तहत देव संस्कृति विश्वविद्यालय को प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष में 20 नर्सिंग छात्राएँ प्राप्त होंगी, जिनको योग्य व अनुभवी प्रशिक्षकों के माध्यम से प्रशिक्षण प्रदान किया जाएगा। यह अनुबंध दोनों संस्थानों के लिए लाभकारी सिद्ध होगा।

इस तरह से देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने सामाजिक, आध्यात्मिक एवं शैक्षणिक सभी आयामों में विद्यार्थियों एवं विश्वविद्यालय के सदस्यों के समग्र विकास हेत् ऐसी अनेकों गतिविधियों को विगत दिनों संपन्न किया, जो आने वाले दिनों में समस्त गायत्री परिवार के लिए मील का पत्थर सिद्ध होने वाली हैं। कोविड की चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों के बाद सफलता के सोपानों पर चढना विश्वविद्यालय के लिए गौरवशाली रहा है।

बदरीनाथ धाम में सनत्कुमार आदि ऋषि साधनालीन थे। एक दिन देवर्षि नारद वहाँ पहुँचे। ऋषियों ने उन्हें चिंतित देखकर कारण पूछा। नारद जी बोले—''पृथ्वी लोक में भक्ति की उपेक्षा हो रही है। लोग भगवान को भूलकर सांसारिकता में घोर लिप्त हो गए हैं और कुमार्गगामी हो गए हैं।'' ऋषि बोले—''यह तो संचमुच चिंता का विषय है। आप धरती पर भगवन्नाम का प्रचार कीजिए, तभी इस समस्या का समाधान होगा।'' नारद जी मुनियों से यह समाधान जानकर धरती पर भगवन्नाम के प्रचार में लग गए। आज भी सांसारिकता में लिप्त मनुष्य जाति को स्वयं में भक्ति जगाने की आवश्यकता है।

\*\*\*\*\*

# अपनों से अपनी बात समग्र एवं संपूर्ण जीवन का आधार है उच्च आदर्श

मनुष्य जीवन को असीम संभावनाओं और क्षमताओं से युक्त कहा गया है। 'यथा ब्रह्माण्डे तथैव पिण्डे' के स्वर में इस जीवन की अनंत सामर्थ्य का गान हुआ है। इस धरती पर हजारों-लाखों की संख्या में प्राणि जातियों का जीवन मौजूद है, लेकिन केवल मनुष्य मात्र को ही इस सृष्टि को जानने एवं पूर्णरूपेण अभिव्यक्ति करने में समर्थ माना गया है। मनुष्य होने के नाते हम सभी के लिए यह अत्यंत गौरव और सौभाग्य की बात है कि हम इस सृष्टि में विशिष्ट प्राणी हैं और अपरिमित शक्ति-सामर्थ्य के उत्तरिधकारी हैं।

परमपूज्य गुरुदेव ने भी कहा कि हम मनुष्यों का जीवन इस धरती पर राजकुमार की तरह है। परमसत्ता ने अपने प्रतिनिधि के रूप में हमें संसार में भेजा है और नर से नारायण बनने की दिव्य संभावना केवल और केवल मनुष्य को ही प्राप्त है, परंतु हम मनुष्यों के जीवन का दूसरा प्रत्यक्ष पहलू यह भी है कि असीम संभावनाओं और अनंत सामध्यों के ईश्वरीय अनुदान से सुसज्जित यह जीवन स्वार्थ, संकीर्णता, अहं, क्षुद्रता, अविवेकशीलता, भय, भ्रम, द्वंद्व, दु:ख, विषाद आदि की जंजीरों में जकड़ा हुआ अभिशाप का पर्याय बनकर सामने आता है।

मानवीय कलेवर में से जिन दैवी गुणों का प्रस्फुटन होना चाहिए था, उनके स्थान पर पाशिवक वृत्तियों का आधिपत्य हो जाना मानव अस्तित्व की सबसे बड़ी त्रासदी और दुर्भाग्य है। मनुष्य जीवन की यह कड़वी, परंतु वर्तमान की कठोर सच्चाई है कि वह चहुँ और मनुष्यों के बीच मनुष्यता को तरस रहा है। अपिरिमित भौतिक चकाचौंध में खड़ा समाज का इनसान भीतर से रोता हुआ और बाहर से इनसानियत को तरसता नजर आता है।

इससे भी बड़ा दु:खद आश्चर्य तो यह है कि मनुष्य को मनुष्यता से जोड़ने के, जीवनमूल्यों से आपूरित करने के, आदर्शों-सिद्धांतों के साँचे में गढ़ने-ढालने के प्रयास विगत शताब्दियों से कहीं ज्यादा वर्तमान में दिखाई पड़ते हैं। लेकिन परिणाम-परिणति अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण और चिंताजनक निकलकर सामने आ रहे हैं। ऐसे में यह उत्तरदायित्व उन सभी के कंधों पर आ जाता है, जो मनुष्यमात्र के कल्याण, उत्थान और विकास की दिव्य प्रेरणा से पूरित-संकल्पित हैं और सतत प्रयासरत भी। आवश्यकता है कि इन प्रयासों की दिशा को परिवर्तित किया जाए और गहन समीक्षापूर्ण तरीके से समस्या के केंद्र में पहुँचकर समाधान के सार्थक उपायों की ओर मानवमात्र के जीवन को मोड़ने का पुरुषार्थ किया जाए।

हमारी दृष्टि में यह शुरुआत जीवन में सही आदर्श की खोज से होनी चाहिए। आदर्शों की डोर से बँधा जीवन कभी भी दिशाहीन एवं मूल्यहीन नहीं हो सकता है। आदर्श, फिर चाहे कोई व्यक्ति, व्यक्तित्व, विचार, सिद्धांत कुछ भी हों, परंतु आदर्श हों अवश्य; ताकि जीवन उनसे सतत प्रेरणा, पथ और प्रकाश प्राप्त करते हुए सही दिशा में आगे बढ़े, लेकिन आदर्श को पहचानें कैसे? सही आदर्श का चयन कैसे करें? तो ध्यान रहे कि आदर्श हमारे जीवन की पराकाष्ठा का पर्याय है। जितना ऊँचा, महान, पवित्र आदर्श होगा, उतना ही जीवन ऊँचाई पर पहुँच पाएगा।

जीवन की अपनी ही प्रकृति, प्रवृत्ति और गित है। इसमें जो, जब, जैसे बीज डालेंगे, उसी के अनुरूप परिणाम प्रस्तुत होंगे। घटिया और ओछे आदर्शों के बीज बोकर हम जीवन को कभी भी ऐसे उच्च विचारों और भावनाओं से नहीं जोड़ सकते, जहाँ से मानवीय गरिमा और गुण प्रकाशित होते हों। इसलिए आदर्श हमेशा बड़ा, महान, उच्च और श्रेष्ठतम ही चयन करना चाहिए।

आदर्श ऐसा हो, जो हमें जीवन की सही दिशा दे सके। जब भी हम विपरीतताओं, विषमताओं और संघर्षमय चुनौतियों के भँवर में फँसे हों, स्वयं को सब ओर से असहाय, बेबस से महसूस कर रहे हों, तब हमारा आदर्श ही एकमात्र वह शक्तिस्रोत होता है, जो हमें इन सारे अंत:-बाह्य झंझावातों से बाहर निकाल सकता है। इसलिए जीवन में आदर्श का स्थान अवश्य होना चाहिए और आदर्श भी ऐसा हो, जिस पर हमारा संपूर्ण विश्वास, अट्ट आस्था और श्रद्धा-समर्पण

\*

की भावना इतनी सुदृढ़ हो कि जिसके लिए आवश्यकता पड़ने पर जीवन भी उत्सर्ग किया जा सके।

आदर्श की छाँह में पोषित, आदर्श के प्रकाश से प्रकाशित जीवन ही संपूर्णता और समग्रता का लक्ष्य प्राप्त कर सकता है। इसके साथ यह भी अनिवार्यता है कि आदर्श के चयन करने में स्वयं के जीवन का आकलन संपूर्णता और व्यापकता में किया जाए। जीवन के लिए लौकिक और अलौकिक, भौतिक और आध्यात्मिक, स्थूल और सूक्ष्म—सभी आयाम समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं, इनमें से किसी एक की उपेक्षा—अवहेलना का तात्पर्य है अस्तित्व की सच्चाई को नकारना और आत्मघाती दिशा में कदम बढ़ाना। अतः ध्यान रहे आदर्श की विशालता में हमारे जीवन की व्यापकता का सहज समावेश संभव हो सके। आदर्श चयन की यह कसौटी उन लोगों के लिए भी है, जिन्होंने अपने जीवन को किसी आदर्श से जोड़ लिया है या किसी को आदर्श बनाकर चल रहे हैं।

सामान्यतया लोग कई बार अपने घर-परिवार के सदस्यों, परिचितों या टेलीविजन, फिल्म, खेल आदि से जुड़ी हस्तियों को अपना रोल मॉडल मानकर चलते हैं। इसमें कोई बुराई भी नहीं है। सत्प्रेरणाएँ जहाँ से मिलें, ग्रहण करने योग्य हैं, परंतु यह सदैव ध्यान रखा जाए कि इन प्रेरणाओं से बाहर भी जीवन का कोई हिस्सा छूट तो नहीं रहा है। जैसे यदि कोई क्रिकेट या कुश्ती जैसे किसी खेल में रुचि रखता है तो उस खेल के शिखरस्थ खिलाड़ियों से वह प्रेरणाएँ ग्रहण कर सकता है, करना भी चाहिए, परंतु साथ में यह भी ध्यान रहे कि खेल-क्षेत्र के अलावा भी जीवन के आयाम हैं, जैसे—घर-परिवार, मित्र, समाज, राष्ट्र और सबसे अहम स्वयं का व्यक्तित्व, चिंतन, चरित्र और व्यवहार है।

ये सभी हमारे जीवन से जुड़े अनिवार्य पहलू हैं। इनकी उपेक्षा हम कदापि नहीं कर सकते और इनसे भी एक कदम आगे बढ़कर जीवन का आत्मिक विकास है। जीवन में आदर्श का मूल प्रयोजन इसी आत्मिक विकास की यात्रा को पूर्ण करना है। ऐसे में यदि हमारा आदर्श एकांगी, संकीर्ण एवं साधारण स्तर का है तो उसी अनुपात में हमारे जीवन की संभावनाएँ और विकास-प्रक्रिया सीमित हो जाते हैं।

आदर्श के समानांतर ही विचारों, कल्पनाओं और जीवन की ऊँचाई होती है। छोटे एवं ओछे आदर्श से ऊँचे एवं महान जीवन की कल्पना बेमानी है। सच्चे आदर्श में जीवन की संपूर्णता, व्यापकता और सर्वोच्चता की विशेषताएँ मौजूद होती हैं। अतः ध्यान रहे कि आदर्श हमारी जिंदगी का चरम बिंदु है। इसके बौने रहने से जिंदगी भी बौनी ही रह जाएगी, इसलिए आदर्श वही चयन किया जाए, उसे ही बनाया जाए, जो जिंदगी के शिखर पर पहुँचा हुआ हो।

सच्चे आदर्श का स्थान सर्वोपिर होता है। उसे हमारा हृदय संपूर्ण रूप से स्वीकार करता है, महसूस करता है। जीवन की उलझनों में, संघषों में वह हमारे लिए प्रकाशस्तंभ की भाँति कार्य करता है। जहाँ भी हम भटकते हैं, जब भी गिरते हैं, हमारा आदर्श ही हमें सँभालता है, उठाता है और आगे बढ़ाता है। एक श्रेष्ठ आदर्श की छाँह में ही हमारा जीवन मनुष्यता के गुणों से विभूषित होता है और व्यक्तित्व में उन मूल्यों को प्रकाशित होने का अवसर मिलता है, जिनसे सच्चे अर्थों में हम मनुष्य कहलाते हैं।

हमारे जीवन की नाव को सही दिशा में चलाने और अभीप्सित लक्ष्य तक पहुँचाने में आदर्शरूपी पतवार ही एकमात्र सहारा होती है। संसार के इस भवसागर में भाग्य, परिस्थितियों और संघर्षों के निरंतर उठते रहने वाले तूफानों– थपेड़ों से बाहर निकाल लाने की शक्ति–सामर्थ्य आदर्श में ही होती है। अत: इन बातों से आदर्श की महत्ता और उसके चयन की अनिवार्यता का बोध स्वत: हो जाता है।

मनुष्य का शरीर धारण कर जीवन में निकृष्टता, मूल्यहीनता, संकीर्णता, निरर्थकता और निराशा की दशा का समाज में निरंतर बढ़ते जाना आदर्शहीनता तथा ओछे आदर्शों का ही परिणाम माना जाना चाहिए। असीम संभावनाओं और क्षमताओं से युक्त जीवन की वर्तमान दशा-दिशा से तुलना की जाए तो घोर निराशा होती है। मानवीय विशेषताओं का पतन और पाशविक आसुरी प्रवृत्तियों का बढ़ते जाना संपूर्ण मानवता के लिए घातक है।

ऐसे में समाधान का समुचित मार्ग तलाशना और उस पर चल पड़ना प्रत्येक मनुष्य का आत्मिक कर्त्तव्य है। अपनी मानवीय काया में जिस आत्मा को लेकर वह पैदा हुआ है—उसे पूर्णता तक विकसित बनाना प्रत्येक मनुष्य के जीवन का सबसे बड़ा एवं प्रमुख कर्त्तव्य है। इस महान लक्ष्य की प्राप्ति और स्वकर्त्तव्यपालन की क्षमता का स्रोत है—जीवन आदर्श।

आदर्श जितना महान होगा, उसी अनुपात में व्यक्ति संकीर्ण बना देगा, इसिलए बड़े एवं महान आदर्श का के विचार, कल्पनाएँ और अंत:भाव पहुँचेंगे और जहाँ चयन कीजिए, तािक मनुष्य जीवन की अपरिमित शिक्ति तक विचार एवं कल्पनाएँ पहुँचेंगी, वहीं तक जीवन की सामर्थ्य संभावनाओं तक पहुँचना संभव हो सके और मनुष्य ऊँचाई होगी। अत: सावधान रहें। छोटा एवं ओछा आदर्श देह में मनुष्यता के प्रकाश से विश्व-समाज पुन: आलोकित असीम व असीमित जीवन की संभावनाओं को सीमित व

\*

सुदीर्घकाल से योग-साधन का प्रयत्न कर रहे शिष्य ने गुरु से प्रश्न किया— ''गुरुदेव! ईश्वरप्राप्ति के लिए कैसी पात्रता आवश्यक होती है?''गुरु ने सहज ही कह दिया—''वत्स! यदि तुम ईश्वरप्राप्ति की इच्छा रखते हो, तो वह तुम्हें अवश्य प्राप्त होगी।'' शिष्य गुरु का मंतव्य नहीं समझ सका। शिष्य की अज्ञानता को भाँप गुरु ने जीवंत उदाहरण के आधार पर अपनी बात को स्पष्ट करने की योजना बनाई। प्रात:स्नान के उपक्रम हेतु वे दोनों नदी की ओर गए। गुरु ने शिष्य को आदेश दिया—''वत्स! इबकी लगाओ।'' गुरु की आज्ञा को शिरोधार्य करते शिष्य ने इबकी लगाई। जल के भीतर अभी वह गया ही था कि गुरु ने एकाएक उसके सिर को भीतर पकड़ लिया और जल में यथावत् डुबोए रखा। श्वास लेने को व्यग्र शिष्य ऊपर आने की चेष्टा करने लगा, किंतु गुरु उसके इस प्रयास में अवरोध बने कुछ क्षण वहीं खड़े रहे। बड़ी देर तक वह अपने प्राणों की रक्षा के लिए जल से ऊपर आने का प्रयास करता थक गया, तब कहीं जाकर गुरु ने उसे छोड़ा। हाँफते हुए वह जल से बाहर निकला और हतप्रभ अवस्था में गुरु को देखने लगा। इससे पहले की वह कुछ बोलता, गुरु ने प्रसन्नचित्त मुद्रा में उससे पूछा—''वत्स! बताओ तो सही, तुम्हें जल के अंदर कैसा लग रहा था?'' हड़बड़ाई स्थिति से सँभला शिष्य कहने लगा—''ओफ! एक श्वास लेने के लिए मेरा जी निकल रहा था।'' गुरु ने अपनी बात आगे बढ़ाते पुन: प्रश्न किया—''क्या ईश्वर के लिए भी तुम्हारी इच्छा उतनी ही प्रबल है ?'' अपनी अवस्था को कुछ देर विचार कर शिष्य ने उत्तर दिया—''नहीं गुरुदेव।'' शिष्य के नैराश्य भाव को तिरोहित करते गुरुदेव ने कहा—''वत्स! ईश्वरप्राप्ति के लिए भी तुम्हारे भीतर वैसी ही उत्कट इच्छा होनी चाहिए, जैसी कि अभी प्राणों के लिए थी और तब ही तुम्हें ईश्वर के दर्शन होंगे।'' शिष्य को अपनी असफलता का कारण और ईश्वरप्राप्ति का उपाय प्राप्त हो गया। गुरुदेव का आशीष प्राप्त कर वह पुनः सच्ची लगन के साथ साधना में तल्लीन हो गया।



वासंती वैभव के निर्झार 'दादागुरु'! नमन है।
'युगवसंत' के शिल्पी सदगुरु को शत-शत वंदन है॥
वासंती अनुदान बरसते 'प्रकृति' पुलकने लगती।
और 'चेतना' नई उमंगें लिए हुलसने लगती॥
तभी प्राण में लहरा उठता, नृतन स्पंदन है।
'युगवसंत' के शिल्पी सदगुरु को शत-शत वंदन है॥
वासंती अनुदानों को ले, फिर बसंत आया है।
कुछ विशेष, उञ्चल भविष्य के संदेशे लाया है॥
मानव के चिंतन-चिरत्र में होना परिवर्तन है।
'युगवसंत' के शिल्पी सदगुरु को शत-शत वंदन है॥
अब जनमानस आंदोलित है, पतझर की पीड़ा से।
ऊब रहा है उसका मानस, भोगों की कारा से॥
मुक्ति चाहता अब बंधन से, जनमानस का मन है।
'युगवसंत' के शिल्पी सदगुरु को शत-शत वंदन है॥

गुरुवर! हमको इस वसंत पर, 'वासंती' कर देना।
पतझर पीड़ित मानवताहित, संवेदन भर देना॥
जनमानस आश्रवस्त हो उठे 'नवयुग-अभिनंदन है'।
'युगवसंत' के शिल्पी सदगुरु को शत-शत वंदन है॥
'वासंती बाना' पहिना है, उसकी शान रखेंगे॥
आज समर्पित 'युगवसंत' को वासंती जीवन है।
'युगवसंत' के शिल्पी सदगुरु को शत-शत वंदन है॥
आग समर्पित 'युगवसंत' को वासंती जीवन है।
'युगवसंत' के शिल्पी सदगुरु को शत-शत वंदन है॥
— मंगलविजय 'विजयवर्गीय'
— मंगलविजय 'विजयवर्गीय'
— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

— भंगलविजय 'विजयवर्गीय'

फरवरी. 2022 : अखण्ड ज्योति

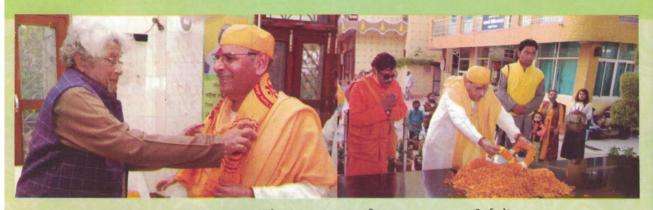


शांतिकुंज स्वर्ण जयंती वर्ष में माननीय राष्ट्रपति श्री राम नाथ कोविन्द का देव संस्कृति विश्वविद्यालय एवं युगतीर्थ शांतिकुंज में शुभागमन एवं श्रद्धेयद्वय से भेंट-परामर्श

**अखण्ड ज्योति** (मासिक) R.N.I. No. 2162/52



प्र. ति. 01.01.2022 Regd. N0. Mathura-025/2021-2023 Licensed to Post without Prepayment N0.: Agra/WPP-08/2021-2023



प्रख्यात कथावाचक संतपुरुष सुधान्शु जी महाराज का युगतीर्थ में आगमन एवं ऋषियुग्म के पावन प्रतीकों पर श्रद्धासुमन अर्पण

शान्तिकृञ्ज स्वर्ण जयन्ती वर्ष

'शांतिकुंज स्वर्ण जयंती व्याख्यानमाला' के अंतर्गत माननीय श्री शिवराज सिंह चौहान, मुख्यमंत्री (मध्य प्रदेश) द्वारा देव संस्कृति विश्वविद्यालय में उद्बोधन एवं श्रद्धेयद्वय से भेंट-परामर्श

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक — मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामंडी, मथुरा—281003 से प्रकाशित | संपादक — डॉ. प्रणव पण्ड्या | दूर भाष—0565-2403940, 2402574 2412272, 2412273 मो बा.—09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039 ईमेल— akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org